प्रकाशन नं.

70

दस गुरुओं का सक्षिप्त इतिहास

सिख मिशनरी कालेज (रजि.)

लुधियाना

11 रुपये

१ੴ वाहिगुरु जी की फतहि ॥

प्रकाशन नं: 70

दस गुरुओं का संक्षिप्त इतिहास

प्रकाशक

सिख मिशनरी कॉलेज (रजिः)

लुधियाना

विषय सूची

श्री गुरू नानक देव जी

(पहली पातशाही)

श्री गुरू नानक देव जी का जन्म, गांव राय भोयं की तलवंडी, जिला शेखुपुरा, (पाकिस्तान) में, 15 अप्रैल सन् 1469 को हुआ। इस स्थान को आजकल ननकाणा साहिब कहा जाता है। आपके पिता जी का नाम मैहता कालू दास था, जो मैहता कालू के नाम से प्रसिद्ध थे। माता जी का नाम तृप्ता जी था। आपकी बड़ी बहन बेबे नानकी जी थीं, जो आयु में आपसे पांच साल बड़ी थीं।

बाल्यावस्था में जब आपको पढ़ने के लिए स्कूल भेजा गया तो आपकी तीव्र बुद्धि को देखकर शिक्षक हैरान हो गए। दस साल की उम्र में जब आपको जनेऊ पहनाने लगे तो आपने जनेऊ का खंडन करके पहनने से इनकार कर दिया। 12 वर्ष की आयु में गुरू नानक देव जी भैंसों के चरवाहा बने। 16 वर्ष की आयु में आपका विवाह बटाला निवासी श्री मूल चन्द जी की सुपुत्री सुलक्षणी जी के साथ हुआ। उनके उदर से बाबा श्री चंद जी व बाबा लक्ष्मी चंद जी का जन्म हुआ।

सन् 1504 में आप अपने जीजा जी, भाई जै राम के पास, सुलतान पुर चले गए। वहां आप नवाब दौलत खां के मोदी बने। यहीं मैल सीहां का भाई भागीरथ, आपका सिख बना। उसी की ओर से भाई मनसुख भी सिख बने। सितम्बर 1507 में आपने वेईं नदी में डुबकी लगाई व नारा लगाया : 'ना कोई हिन्दू ना कोई मुसलमान'। जब आप काज़ी व नवाब के साथ नमाज़ पढ़ने के लिए गए तो वहां आपने नमाज़ तो क्या पढ़नी थी, उनके दिल पढ़ लिए।

अक्तूबर 1507 में आप अपना परिवार अपने ससुर बाबा मूल चंद के सुपूर्द करके, भाई मर्दाना को साथ लेकर अपनी पहली उदासी (प्रचारक दौरा) हिन्दू तीर्थों की दिशा से शुरू की। इस तरह दो अन्य प्रचारक दौरों द्वारा लगभग 12 साल आपने सिख धर्म का प्रचार किया।

लोगों को कर्म-कांड से निकाल कर एक अकाल पुरख का सुमिरन (स्मरण) करने की प्रेरणा दी। परिश्रम करके कमाई करनी सेवा करनी [दीन दुखी की सहायता] मिल बांट कर खाना आपके सुनहरी उपदेश हैं। सन् 1532 में बाबा लहणा जो आपको करतारपुर में मिले। आप ने उनकी कई परीक्षाएँ लीं व उपयुक्त पाये जाने पर सितम्बर 1532 में उन्हें गुरू-गद्दी सौंप दी। भाई लैहणा जो को गुरू अंगद साहिब बना कर आप स्वयं प्रलोक गमन कर गये।

जनेऊ का खंडन

हिन्दुओं में रीति है कि जब लड़का दस बारह साल का हो जाए तो उसे जनेऊ पहनाया जाता है। जनेऊ सूत के धागे का बनाया जाता है। इसे डालने के लिए एक विशेष दिन निश्चित किया जाता है। उस दिन सभी सगे-संबंधी इकट्ठे होते हैं। जनेऊ डालने की रीति पंडित द्वारा संपूर्ण की जाती है।

गुरु नानक देव जी का जन्म क्योंकि क्षत्रिय जाति की वेदी कुल में हुआ था, इसलिए गुरु जी के पिता मैहता कालू जी ने अपने पुत्र को जनेऊ पहनाने की रस्म को पूरा करने का फैसला किया घर के पुरोहित, हरदयाल जी की सलाह से दिन निश्चित किया गया। सारी बिरादरी व संबंधी एकत्रित हुए। पुरोहित ने शास्त्रों में उल्लिखित मंत्र पढ़े व अन्य रस्मो कार्यवाही भी पूरी की। गुरु नानक देव जी, पंडित जी का यह तमाशा देखते रहे। अब पंडित जो ने जैसे ही गुरु जी को जनेऊ डालने के लिए हाथ ऊपर किया तो गुरु जी ने भरी सभा में पंडित जी का हाथ पकड़ लिया व कहने लगे "पंडित जी, यह क्या है ? यह धागा सा आप मेरे गले में क्यों डालने लगे हो ?" पंडित जी ने उत्तर दिया, "यह धागा नहीं बल्कि पवित्र जनेऊ है। यह उच्च जाति के हिन्दुओं की निशानी है। इसके बगैर व्यक्ति शूद्र के समान है। यदि आप जनेऊ डाल लेंगे तो आप पवित्र हो जायेंगे। यह जनेऊ अगले संसार में भी आपकी सहायता करेगा।"

पंडित जी की बात सुनकर गुरु जी कहने लगे, "पंडित जी, आपने जनेऊ के बहुत से गुण बताए हैं। पर मुझे कुछ शंका है। आपने कहा कि यह धागा उच्च जाति की निशानी है। पर मैं यह बात नहीं मानता। उच्च जाति वाला तो वह है जिसने उच्च व नेक कार्य किये हों। पवित्र वह है जिसके कार्य पवित्र हैं। नीच वह है जिसके कार्य नीच व बुरे हैं। अच्छे बुरे कार्य ही ऊंची-नीची जाति की पक्की निशानी होते हैं। साथ ही यह धागा तो कच्चा है। यह मैला भी हो जायेगा। इसके पश्चात नया धागा डालना पड़ेगा। इस धागे ने किसी को क्या सम्मान देना है ? वास्तविक सम्मान तो नेक-जीवन व्यतीत करने से ही प्राप्त हो सकता है। साथ ही आप कहते हैं कि यह धागा मनुष्य के अगले जन्म में सहायता करता है, तो वह कैसे ? यह धागा तो शरीर के साथ, यहीं इसी संसार में रह जायेगा। इसने आत्मा के साथ नहीं जाना है। जब अंतिम समय शरीर जलेगा, तो यह धागा भी उसके साथ ही जल जायेगा। इसलिए आप मुझे ऐसा धागा डालें, जो हर समय मेरे साथ रहे। मुझे बुरे कार्य करने से रोके व नेक कार्य करने के लिए प्रेरणा दे। जो अगले संसार में भी मेरी सहायता करे, यदि ऐसा जनेऊ आपके पास है, तो आप वह मेरे गले में डाल सकते है।"

गुरु जी के वचन बहुत ही स्पष्ट थे। बात सबकी समझ में आ गयी। पर सभी बहुत ही हैरान थे कि आज तक किसी ने भी ऐसी कोई बात नहीं की जो दस वर्षीय बालक (गुरु नानक) ने कर दिखाई है। उनके मां-बाप ने बड़े लाड़ के साथ समझाया। पंडित जी ने बहुत ही मीठे शब्दों में बताया कि शास्त्रों का उल्लघन करना ठीक नहीं। पर गुरु नानक देव जी अपने इरादे पर दृढ़ रहे। उनकी मांग थी कि आध्यात्मिक जीवन के साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं। वास्तव में न तो जनेऊ डालने वाले में तथा न ही डलवाने वाले में कोई आध्यात्मिक परिवर्तन आता है, और न ही इससे मनुष्य में कोई गुण पैदा होते हैं।

दस साल की आयु में गुरु नानक देव जी की हिन्दुओं के क्रम-कांड पर यह पहली करारी चोट थी, जिसके आगे पंडित जी व

अन्य सबको झुकना पड़ा। उन्होंने यह बता दिया कि 'मैं हिन्दू नहीं, मेरा धर्म कुछ और ही है।'

शिक्षा : इससे हमें यह शिक्षा मिलती है कि कोई भी मनुष्य ऊँचा अथवा नीचा नहीं है। सिख किसी भी जात-पात को नहीं मानते। ऊंचा वही है जो नेक कार्य करे। नीच वह है जो नीच कार्य करे। जनेऊ डालने से मनुष्य धर्मात्मा नहीं बन सकता। इस तरह गुरु जी ने स्पष्ट कर दिया कि गुरु नानक के सिख को ब्राह्मण द्वारा बनाये हुए जाल में नहीं फंसना है। यह सब धर्म-कर्म के नाम पर एक बड़ा धोखा है। इसी से ही इंसान-इंसान में मतभेद डाले गए हैं।

ब्राह्मण कर्म-कांड ये हैं वहम, शगुन-अपशगुन के चक्कर, मुहूर्त निकलवाना, हाथ दिखाना, जन्म-पत्री व टेवे बनवाने, व्रत रखवाने, जात-पात के चक्करों में फंसना, राशि-फल के भ्रम, सक्रांति व पूर्णिमा आदि को मानना, चालीसे काटने, माला पकड़नी या फेरनी, तीर्थ स्थान करने, पितृ-कर्म, श्राद्ध करने, देवी-देवताओं की पूजा करनी, जागरण करवाने, राखी बांधनी, टीका व तिलक लगवाना, लोहड़ी जलानी, मौन व्रत रखने, नंगे या भूखे रहना, नंगे पांव चलना आदि। गुरु के सिख को यह सब नहीं करना है।

सच्ची भक्ति

जब गुरु नानक देव जो वेईं नदी से बाहर आए तो उन्होंने सबसे पहले नारा लगाया 'ना कोई हिन्दू न कोई मुसलमान।' गुरू जी ने कहा कि हमें हिन्दू-मुसलमान के मत-भेद को छोड़ देना चाहिए। परमात्मा को सारी सृष्टि में देखो। एक ही 'अकाल पुरख' को याद करो जो सभी के अन्दर निवास करता है।

जब सुलतानपुर के नवाब दौलत खान और काज़ी ने गुरु जी की यह बात सुनी, तो कहने लगे, "गुरू जी. यदि आपको हिन्दुओं व मुसलमानों के अंदर एक ही परमात्मा दिखाई देते हैं, तो आइए हमारे साथ मिलकर नमाज पढ़ें। सति गुरू. नवाब व काज़ी के साथ चल पड़े।

मस्जिद में सभी मुसलमान एकत्रित हुए। सब के आगे काज़ी ने खड़े होकर नमाज़ पढ़नी शुरू की। गुरू जी भी उसके साथ खड़े हो गए व काज़ी के चेहरे को देखते रहे। सतिगुरू जी काज़ी की ओर देखते हुए हँस पड़े। उन्होंने काज़ी के चेहरे से भांप लिया कि उसका मन कहीं और भटक रहा है।

उस समय मुसलमानों का राज्य था, उन्हीं का ही वह धार्मिक स्थान था। सुलतानपुर का सबसे बड़ा हाकिम वहां हाजिर था। यह केवल गुरू जी जैसे नूरानी पुरुष का ही काम था कि नमाज़ पढ़ते हुऐ काज़ी के पास खड़े होकर उसकी हंसी उड़ाएँ। गुरू जी तो सत्य को सत्य कहना जानते थे। स्पष्ट व सच्ची बात कहते हुए वह डरते नहीं थे। उनके जीवन में डर नाम की कोई चीज थी ही नहीं।

काज़ी यह कैसे सहन कर सकता था कि कोई उनकी हँसी उड़ाए। उसने नमाज़ पढ़ने के बाद नवाब से इस बात की शिकायत की। जब गुरू जी से पूछा गया कि आपने नमाज़ क्यों नहीं पढ़ी, और हंसने का क्या कारण था, तो गुरू जी ने उत्तर दिया, "मैं नमाज़ किसके साथ पढ़ता ? काज़ी साहब मुंह से तो नमाज़ पढ़ रहे थे, पर इनका मन नमाज़ में नहीं था। इनका मन तो घर पहुंचा हुआ था कि कहीं नया पैदा हुआ बछेरा (घोड़ी का बच्चा) बरामदे के बीच के कुएं में न गिर जाय।" गुरू जी का कहने का तात्पर्य यह था कि केवल जिव्हा द्वारा ही अक्षर पढ़ने का कोई लाभ नहीं है। यदि मन प्रभु के साथ नहीं जुड़ पाया तो ऐसी नमाज़ पढ़ने का क्या लाभ है, अर्थात ऐसी नमाज़ सच्ची कैसे हो सकती है ?

वहाँ खड़े सभी लोगों को यह बात समझ में आ गयी व सभी धन्य गुरू नानक, धन्य गुरू नानक कह उठे।

शिक्षा :— सच्ची भक्ति तभी समझी जा सकती है जब मन परमात्मा के साथ जुड़ा रहे। जब हम लोगों के सामने तो मुंह से पाठ कर रहे होते हैं, पर अंदर से मन 'पाठ' में नहीं लगा होता, तो यह प्रभु की सच्ची भक्ति नहीं होती। आजकल दूसरों की देखा देखी सिखों में एक अन्य बुराई चल पडी है, वह है पैसे व भेंट देकर पाठ

करवाने की। जो पाठ करवाते हैं, वे खुद तो सुनते नहीं हैं। वे समझते हैं कि इससे कोई महातम मिलेगा। यह केवल अपने आपको धोखा देना व पैसा व्यर्थ करना ही है।

सच्ची आरती

लोगों को सच्चे धर्म का उपदेश देते हुए, गुरू नानक देव जी जगन्नाथ पुरी जा पहुंचे। यह शहर समुद्र के किनारे पर बसा है। यह हिन्दुओं का बड़ा तीर्थ-स्थान है। एक मंदिर के अंदर जगन्ननाथ की मूर्ति है, जिसकी पूजा होती है।

गुरू जी मंदिर से कुछ दूरी पर जाकर बैठ गए। भाई मर्दाना रबाब बजाने लगा। गुरू जी शब्द-कीर्तन करने लगे। लोग उनके आस पास इकट्ठे हो गए। वे कीर्तन को सुनकर मुग्ध हो गए। लोगों ने गुरू जी से परमात्मा के बारे मे व मुक्ति के बारे में बहुत सी बातें पूछीं। गुरू जी ने सभी प्रश्नों के उत्तर दिए। जब शाम हो गई तो ब्राह्मण व पुजारियों ने गुरू जी से कहा, "जगन्नाथ की आरती होने वाली है। चलिए, आप भी शामिल हों।"

गुरू जी ने कहा, "जगत के नाथ (परमात्मा) की आरती में हम अवश्य शामिल होंगे, चलिए।"

गुरू जी जगन्नाथ के मंदिर पहुचे। वह क्या देखते हैं कि एक बड़े से सुनहरी थाल में हीरे मोती व जवाहारात जड़े हुए हैं। उसमें एक बड़ा सा चार बत्तियों वाला दीपक है। दीपक की चारों बत्तियां जग रही हैं। दीपक के साथ थाल में सुगंधित धूप जल रही है। एक तरफ चाँदी की थाली में चंदन का बूरा पड़ा है। उसके ऊपर सुगंधित काफूर की टिक्किया रखी हुई हैं, जिनको आग लगा कर रखा गया है। मूर्ति पर 'चवर' हो रहा है। ढोलक नगारे, आदि बज रहे हैं। मूर्ति की आरती हो रही है। थाल को नीचे-ऊपर दाएं-बाएं गोल-चक्कर में घुमाया जा रहा है। साथ ही ब्राह्मण व अन्य लोग भजन गा रहे हैं।

गुरू जी चुपके से बाहर आ गए। आप सितारों से सजे नीले

आसमान को देखते रहे, व परमात्मा की प्रकृति को निहारते हुए यश गायन करते रहे।

जब लोग आरती करके बाहर आए तो उन्होंने गुरू जी से पूछा, "आप आरती में शामिल क्यों नहीं हुए ?" गुरू जी ने बहुत धैर्य के साथ उत्तर दिया, 'मैं तो जगत के मालिक, परमात्मा की सच्ची आरती करता रहा हूं। आप स्वयं ही उस सच्ची आरती में शामिल नहीं हुए।"

एक ब्राह्मण ने पूछा, "आप यहां बैठ कर कौन-सी आरती करते रहे हैं ? आरती तो मंदिर के अंदर हो रही थी।"

गुरू जी ने बताया, "मंदिर की आरती झूठी थी। जगत के मालिक की सच्ची आरती हर समय, हर जगह हो रही है। हम, मनुष्य के हाथों से बनाई हुई किसी मूर्ति की आरती नहीं करते। हम तो परमात्मा की सच्ची आरती करते हैं।" यह वचन कह कर गुरू जी ने भाई मर्दाना जी को इशारा किया। भाई मर्दाना ने रबाब बजाई। गुरु जी ने धनासरी राग में इस शब्द का उच्चारण किया :

"गगन महि थालु रवि चंद दीपक बने, तारिका मंडल जनक मोती .....

इस शब्द-कीर्तन के बाद गुरु जी ने उसके अर्थ समझाए। गुरू जी ने बताया कि आसमान एक थाल के समान है। सूर्य तथा चन्द्रमा उस थाल में दीपक के समान है। सितारे मोती हैं। सुगंध वाले फूल व चंदन के वृक्ष आदि धूप समान है। चल रही हवा चवर कर रही है। वाहिगुरु यह आरती हर समय स्वयं देख रहा है, और प्रसन्न हो रहा है। यह आरती हर समय होती रहती है। आप भी ऐसी आरती में शामिल हों। प्रभु की आरती थालियों में नहीं उतारी जा सकती व ना ही कोई व्यक्ति अथवा उसकी मूर्ति स्वयं जगन्नाथ (प्रभु) हो सकती है। इससे सबको सच्ची आरती का पता चला। लोगों को समझ आ गई कि यह जगन्नाथ तो एक मूर्ति मात्र है जो मनुष्य ने स्वयं बनाई है। मूर्ति पूजा का कोई लाभ नहीं। उन्हें जगत के सच्चे मालिक, एक परमात्मा की पूजा करनी चाहिए।

शिक्षा :— मूर्ति का कोई लाभ नहीं। मूर्ति व्यक्ति के अपने हाथों की बनाई हुई है। मूर्ति भगवान नहीं हो सकती। हमें परमात्मा का

स्मरण करना चाहिए। मूर्ति हमें कुछ नहीं दे सकती। परमात्मा ही मनुष्य को पैदा करता हैं तथा वही सब कुछ दे रहा है। पत्थर की मूर्तियों के आगे नाक रगड़ना, सिवाय मूर्खता के और कुछ नहीं है। सिख धर्म में मूर्ति पूजा वर्जित है। आज भी कई गुरुद्वारों में थाल सजाकर या वैसे ही आरती उतारी जाती है। यह हमारी नासमझी व मूर्खता है। गुरबाणी को समझ कर पढ़ना चाहिए, तभी सच्चाई का पता लग सकता है।

हक की कमाई

गुरु का सिख मेहनत करके रोटी कमाता है। सिख कभी किसी से भीख नहीं मांगता। वह किसी पर अत्याचार नहीं करता! जुल्म की कमाई नहीं खाता। सिख, धर्म की कमाई करता है। अपनी हक की कमाई से दूसरों की सहायता करता है। सिख अपनी कमाई का दसवां भाग गुरुद्वारे में देता है। इस दसवें हिस्से को 'दसवंध" कहते हैं। मेहनत करके कमाई करने वाले को गुरु जी प्यार करते हैं।

ऐमनाबाद शहर में एक सिख था जिसका नाम भाई लालो था। वह मेहनत करके अपनी रोटी कमाता था भाई लालो बढ़ई था। चाहे स्वयं वह गरीब था, पर फिर भी अपनी तरफ से जरुरतमंदों को रोटी खिलाता था। लोग इसे नीच जाति का कहते थे, पर गुरु नानक देव जी उसे प्यार करते थे। उसके घर जाकर रहते थे। अपने आप को उच्च जाति का समझने वाले ब्राह्मण व क्षत्रीय इस बात से ईर्ष्या करते व गुरु जी के विरुद्ध प्रचार करते रहते। ऐमनाबाद के हाकिम का एक अहिलकार था। उसका नाम था मलिक भागो वह जाति का क्षत्रिय था। वह बहुत रिश्वतखोर था। गरीब लोग मलिक भागो से बहुत दुःखी थे। मलिक भागो को अपनी उच्च जाति का अभिमान था। वह हर वर्ष गरीबों व संतों-साधुओं को भोजन करवा कर धर्मात्मा कहलाता था। इस बार भी उसने बहुत सुन्दर व स्वादिष्ट पकवान तैयार करवाए। चलते फिरते संत साधुओं को उसने बुलाया। संत साधु आये व उन्होंने उसके पकवानों का रसास्वादन किया तथा उसे धर्मात्मा कह कर

पुकारा। गुरू नानक देव जी उस समय भाई लालो के घर ठहरे हुए थे। मलिक भागो ने गुरू साहिब को भी आमन्त्रित किया पर गुरू जी नहीं आए। मलिक भागो ने इसे अपना बड़ा अपमान समझा। ब्राह्मणों व क्षत्रियों ने उसे और अधिक भड़काया। गुस्से में भरकर उसने फिर बुलावा भेजा। गुरू जी, भाई मर्दाना के साथ आ गए पर भोजन ग्रहण करने से इनकार कर दिया। मलिक ने पूछा, "आप मेरे ब्रह्म भोज में शामिल क्यों नहीं हुए ? क्षत्रिय होकर शूद्र लालो के घर रोटी खाते हो ? शूद्रों के पास जाने से हमारा धर्म भ्रष्ट हो जाता है।"

"भाई लालो शूद्र नहीं, मेरा प्यारा सिख है। वह मेहनत करके रोटी खाता है। धर्म का काम करता है। उसकी रोटी चाहे मोटे अनाज की है पर फिर भी उसमें दूध है। तेरी कमाई धर्म की नहीं। तुम लोगों पर अत्याचार करते हो, रिश्वत लेकर गरीबों का खून चूसते हो, तुम्हारी पूड़ियां गरीबों के खून से बनी हुई हैं। इसलिए मुझे तेरे भोजन से भाई लालो की सूखी रोटी अधिक स्वादिष्ट लगती है। मैं तेरी खून से बनी हुई पूरियां नहीं खा सकता।" भरी सभा में, यह गुरू जी का बहुत निर्भीक उतर था। हमें गुरू जी ने निर्भीक बनने की प्रेरणा दी है।

मलिक भागो ने जब गुरू जी से सच्ची बातें सुनीं तो बहुत शर्मिंदा हुआ। उसके किए हुए गुनाह उसकी आखों के सामने आ गये। उसका उच्च जाति का घमंड भी जाता रहा।

गुरू जी ने समझाया कि कोई भी मनुष्य नीच नहीं होता। नीच वह है जो नीच कार्य करे। गरीबों का खून चूस कर, कमाई हुई दौलत से ब्रह्म भोज कर देने से, वह हक की कमाई नहीं बन जाती। सच्ची कमाई वह है जो दोनों हाथों (दस उंगलियों) की मेहनत से की जाये, जिस कमाई के लिए किसी के साथ धोखा व जबरदस्ती न की गई हो।

शिक्षा : हमें भी भाई लालो की तरह सच्चा सिख बनना है। धर्म की नेक, और मेहनत करके हक की कमाई करनी है। गुरू जी के प्यारे सिख बनना है। ब्राह्मणों द्वारा किया गया जातीय भेद—ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, वैश्य आदि लोगों के साथ धोखा है। गुरू

का सिख किसी को शूद्र व नीच नहीं समझता और ब्राह्मण को ऊंचा नहीं मानता। आजकल कई लोग दूसरों के साथ धोखा-ठगी करके मलिक भागो की तरह पैसा इकट्ठा करते हैं। प्रत्येक वर्ष अखंड पाठ करवा कर तीर्थ स्थान करके समझते हैं कि उनके पाप धुल गए हैं। इस प्रकार वे अपने आपको धोखा दे रहे हैं। पाप तभी धुल सकेंगे, जब हम धर्म के रास्ते पर चलते हुए सच्चा व पवित्र कार्य करेंगे। नाम जपेंगे व मिल बांट कर खायेंगे।

सज्जन ठग

एक बार गुरू नानक देव जी व भाई मर्दाना एक गांव में पहुंचे। गांव का नाम था 'तुलंभा'। यह गांव अब पाकिस्तान के ज़िला मुलतान में है। वहाँ एक बहुत बड़ा ठग रहता था, जिसका नाम था 'सज्जन'। उसने शहर से बाहर की ओर एक बड़ी सी सराय बना रखी थी, जिसमें वह आने-जाने वालों की सेवा करता था।

सज्जन, साधुओं फकीरों वाले कपड़े पहनता था। आए हुए मुसाफिर की वह बहुत सेवा करता था। अच्छा खाने को देता था व सोने के लिए अच्छी चारपाई व बिस्तर बिछा दिया करता। जब मुसाफिर सो जाता तो वह और उसके साथी उस मुसाफिर को मार देते तथा मालधन लूट लेते। पर दूर के लोगों में उसका बहुत सम्मान था। लोग उसे भगवान का प्रेमी और लोगों का भला करने वाला समझते थे।

गुरू नानक देव जी ऐसे ही बुरे व्यक्तियों का सुधार करने आए थे। यह गुरू जी की हिम्मत थी कि ठगों व बदमाशों के पास जा कर उनको अच्छी शिक्षा देते व सही रास्ता दिखाते। सज्जन ने गुरू जी व मर्दाना की सेवा करनी चाही, पर गुरू जी ने पहले से भाई मर्दाना को सब कुछ समझा दिया था कि हम ने यहाँ कुछ खाना पीना नहीं है। सज्जन समझता था कि वे धन-दौलत वाले हैं, अच्छी पूंजी हाथ लगेगी। दूसरी तरफ गुरू जी सज्जन व उसके साथियों की बुरी नियति के बारे में जानते थे।

जब सज्जन काफी पदार्थ लेकर आया तो गुरू जी ने खाने से इनकार

कर दिया। फिर गुरू जी को आराम करने के लिए कहा गया। गुरु साहिब ने उत्तर दिया कि हमें जिस कार्य के लिए अकाल पुरुख नें भेजा है, उसे समाप्त करके ही आराम करेंगे। सज्जन दूसरे कमरे में मौके की इंतजार में जा बैठा। सोचने लगा जब ये सो जायेंगे तो वह अपना काम कर लेगा।

इधर गुरू जी ने मर्दाना को रबाब बजाने के लिए कहा। गुरु जी ने राग सूही में इस शब्द का उच्चारण किया :—

"उज्जल कैहा चिलकणा घोटम कालड़ी मस ॥"

जब सज्जन ने साथ के कमरे में यह शब्द सुना तो उसे बहुत ही हैरानी हुई। उसे शब्द में अपना पाखंड स्पष्ट दिखाई देने लगा। वह उठकर गुरु जी के कमरे में पर्दे के पीछे जा बैठा। उसे अनुभव हुआ कि गुरु जी उसके कुकर्मों को अच्छी तरह जानते हैं। वह गुरु साहब के चरणों पर गिर पड़ा।

गुरु जी से उसने पूछा, 'तेरा नाम क्या है ?" उसने कहा कि उसका नाम सज्जन है। हिन्दू उसे सज्जनमल कहते हैं। मुसलमान उसे शेख सज्जन शाह कह कर पुकारते हैं।

सज्जन का यह नाम सुनकर गुरु जी हँस पड़े। वह कहने लगे "तेरा नाम तो बहुत सुन्दर है, पर क्या तुम काम भी सज्जनों वाले करते हो ?"

सज्जन ने यह सुनकर अपना सिर नीचे झुका लिया।

गुरु जी ने कहा, "सज्जन! तेरे कार्य सज्जनों वाले नहीं। तुम लोगों को धोखा देते हो। पाप करके तुम धन इकट्ठा कर रहे हो। लोगों के लिए तुम सज्जन हो, साधु हो, पर परमात्मा को धोखा नहीं दे सकते। वह तुम्हारे सभी कार्यों को जानता है। याद रख, एक दिन मरना जरूर है। यह धन यहीं रह जायेगा, पर इस धन की खातिर किये हुए पाप तेरे साथ ज़ायंगे। जब तुझे बुरे कर्मों का फल मिलेगा, तो सोच, तेरा क्या हाल होगा। सज्जन, अभी भी समय है, बुरे कार्यों को छोड़, अच्छे कार्यों में लग जा। सचमुच में लोगों का सज्जन बन और हर किसी का भला कर। परमात्मा का नेक इनसान बन।"

इससे सज्जन बहुत शर्मिन्दा हुआ। गुरू जी के चरणों पर गिर

पड़ा व कहने लगा, "गुरू जी, मैं गलत रास्ते पड़ गया था। अब मेरी गलतियां माफ कर दो, आगे से मैं कोई बुरा कार्य नही करूंगा।"

गुरू जी ने उसे परमात्मा का सुमिरन करने, नाम जपने, धार्मिक कार्य करने व बांट कर खाने का उपदेश दिया। सज्जन ने सभी बुरे काम छोड़ दिये। गुरू जी की आज्ञा मानकर उसने सिख धर्म का प्रचार किया।

शिक्षा :– आजकल भी सज्जन जैसे कुछ पाखंडी संत-साधु घूम रहे हैं, जो बाहर से तो संत हैं लेकिन अंदर से ठग। वे अपनी स्वार्थपूर्ति हेतु गुरबाणी के गलत अर्थ कर रहे हैं। लोगों से वैसे कार्य करवा रहे हैं, जिनसे गुरू जी हमें मना कर रहे हैं। ये बाहर देखने से भोले-भाले व शरीफ लगते हैं, पर अदर से सज्जन जैसे ठग होते हैं। गुरबाणी से नासमझ लोग गुरूद्वारे जाना छोड़कर इन ठगों के पास जाना शुरू कर देते हैं, व इस तरह उनके जाल में फँस जाते हैं। ये नकली संत-साधु, लोगों को लूट रहे हैं। हमें उनसे बचना है, जितनी देर तक मन पवित्र नहीं, बाहर का रूप मनुष्य को कुछ नहीं सुधार सकता। हमें इन संत साधुओं के कदमों पर नहीं चलना। केवल गुरबाणी के वचनों व उसके उपदेशों को मानकर ही चलना है।

हरिद्वार

एक बार गुरू नानक देव जी हरिद्वार पहुँचे। हरिद्वार को हिंदू अपना पवित्र तीर्थ मानते हैं। यह गंगा के किनारे पर स्थित है। हिंदू लोग मृतकों की अस्थियां गगा में जल-प्रवाह करते हैं। वे समझते हैं कि इसके बिना मुक्ति नहीं हो सकती, पर यह उनकी भूल व भ्रम है। यहां बड़े-बड़े मेले लगते हैं। जब गुरू जी यहां पहुचे तो बैसाखी का मेला लगा हुआ था। लोग बैसाखी गंगा में स्नान कर रहे थे। बहुत से लोग नदी में खड़े होकर पूर्व दिशा की ओर पानी फेंक रहे थे। लोग समझते थे कि इस तरह फेंका हुआ पानी उनके पितरों को पितृ-लोक में पहुच रहा है। उनके इस गलत विश्वास को दूर करने के लिए ही गुरू साहिब वहां पहुचे।

गुरू जी भी गंगा में खड़े हो गये व पूर्व की जगह पश्चिम की तरफ पानी फेंकने लगे। लोगों के लिए यह एक नई व अनोखी बात थी।

पहले किसी ने कभी किसी को इस तरह करते नहीं देखा था। लोग गुरु जी के आस-पास आकर इकट्ठे हो गए! उन्होंने गुरू जी को कहा, "आप यह क्या कर रहे हैं। आप पश्चिम की तरफ पानी क्यों फेंक रहे हैं?" गुरू जी ने सबकी तरफ देखा व पूछा, "आप किस तरफ पानी फेंक रहे हैं?" लोग कहने लगे, "हम तो पूर्व की तरफ (सूर्य की ओर) मुंह करके अपने पित्तरों को पानी दे रहे हैं।" गुरू जी ने पूछा, "वे पित्तर कहां है, वे यहां से कितनी दूर हैं?" लोगों ने जवाब दिया, "बड़ी दूर, लाखों करोड़ों कोस दूर।", अब गुरू जी ने लोगों को बताया कि "मेरी खेती तलवंडी में सूख रही है। वह जगह यहां से केवल साढ़े तीन सौ मील की दूरी पर है। अभी वर्षा नहीं हुई इसलिए मैं उन खेतों को पानी दे रहा हूं।" यह कह कर गुरू जी फिर पश्चिम की तरफ़ पानी फेंकने लगे।

लोग यह देखकर बहुत जोर से हँसने लगे व कहने लगे, "आपके खेत तलवंडी में हैं। यहां से दिया गया पानी इतनी दूरी तक कैसे पहुंचेगा?" पानी तो यहीं गिर रहा है।"

गुरू जी ने उत्तर दिया, "जैसे आपके द्वारा फेंका हुआ पानी पित्तरों के पास पहुंचेगा। यदि मेरे द्वारा फेंका हुआ पानी इसी धरती में साढ़े तीन सौ मील की दूरी में नहीं पहुंच सकता तो आप द्वारा फेंका हुआ पानी लाखों करोड़ों मील की दूरी पर व सूर्य से आगे पित लोक में कैसे पहुंच सकता है?"

यह सुनकर लोग चुप हो गए, उनको अपनी गलती का आभास हो गया था। वे समझ गये कि उनका विश्वास झूठा है। पूर्वजों को पानी देने वाली बात झूठी है। वे गुरू जी से सहमत हो गये। सारे गुरू जी के चरणों पर गिर पड़े। गुरू जी ने सबको धर्म के सच्चे मार्ग का ज्ञान कराया व कहा कि परमात्मा का सुमिरन करो, नेक काम करो। लोगों ने महसूस किया कि ब्राह्मणों ने उन्हें भ्रम जाल में डालकर बुरे रास्ते में डाल दिया दिया था। वास्तव में वे इसी बहाने उनसे दान दक्षिणा लेकर, अपना उल्लू सीधा करते, व बैठे-खाते पीते हैं।

शिक्षा:—सूर्य कोई देवता नहीं है। सूर्य की पूजा करने का कोई

लाभ नहीं है। केवल एक अकालपुरख को याद करना चाहिए। तीर्थ स्थान करने से कोई भी लाभ नहीं होता, स्नान तो केवल शरीर को स्वच्छ रखने के लिए होता है। कोई भी स्थान छोटा या बड़ा नहीं। जो लोग मरे हुए व्यक्तियों की अस्थियां गंगा में डालकर यह समझते हैं कि स्वर्ग मिलेगा, तो यह उनका केवल भ्रम मात्र है। परमात्मा को मिलने के लिए अंधभक्ति समाप्त करनी आवश्यक है। इससे धर्म व समय व्यर्थ नहीं होता। आजकल गुरू के कई सिख भी गंगा तीर्थ के स्थान पर कीरतपुर अथवा करतारपुर साहिब अस्थियां जल प्रवाह करवें जाते हैं। यह हमारी केवल नासमझी है। ऐसे लोगों को 'सिख रहत मर्यादा' पढ़नी चाहिए व गुरबाणी को समझना चाहिए।

वैष्णव साधु का खण्डन

गुरू नानक देवजी सिख धर्म का प्रचार करते-करते हरिद्वार पहुंचे। आपने गंगा के किनारे जाकर डेरा लगाया। गुरू साहिब के डेरे से थोड़ी ही दूरी पर एक वैष्णव साधु का डेरा था। यह साधु बहुत ही पाखंडी था। लोगों के सम्मुख अपने धर्मात्मा होने का पाखंड करता था। इस पाखंडी का भेद खोलने के लिए गुरू साहिब ने डेरा डाला था।

दूसरे दिन सुबह साधु ने स्नान किया। भोजन पकाने की तैयारी करने लगा। रसोई तैयार करने के लिए गाय के गोबर से लेप किया। लकड़ियों को पानी से धोया; रसोई के आसपास लकीर खींच दी ताकि राक्षस, अन्न का रस न हड़प लें। वह लकड़ियों को जलाकर भोजन तैयार करने लगा।

गुरू जी ने साधु के इस पाखंड का खण्डन करना था व लोगों को समझाना था कि यह धर्म नहीं है, बल्कि एक पाखंड है। भाई मर्दाना को गुरू जी ने साधु से आग मांग कर लाने को भेजा। भाई मर्दाना ने साधु से आग मांगी। साधु क्रोध से पागल हो उठा व भाई मर्दाना को गालियां देने लगा। साधु भाई मर्दाना से कहने लगा, "तूने मेरी रसोई

भ्रष्ट कर दी है।" वह इतना क्रुध था कि आग की जलती हुई एक लकड़ी लेकर भाई मर्दाना के पीछे दौड़ा। मर्दाना गुरू जी के पास पहुंचा। पीछे-पीछे साधु भी आ गया।

गुरू नानक साहिब ने पूछा, "साधु जी! आप इतने गुस्से में क्यों हैं?" साधु ने गुस्से में ही जवाब दिया, "इस मरासी (एक अछूत जाति) ने मेरी रसोई भ्रष्ट की है। मर्दाना शूद्र जाति का है, इसलिए मेरा जन्म भ्रष्ट हो गया है।"

गुरू साहिब ने उत्तर दिया, "यह कैसे हो सकता है? भाई मर्दाना भी तो तेरे जैसा इनसान है। नीच तो वह है जो नीच कर्म करे।" गुरू जी नें साधु से कहा, तुम अपने अन्दर नजर डाल कर देखो, तुम्हारे अन्दर कितने अवगुण भरे पड़े हैं। तुम्हारे हृदय में दया नहीं क्रोध है। देखो तुम्हारे अन्दर प्यार नहीं नफरत है। तुम्हारे अन्दर सभी का भला नहीं, परनिंदा है। ऊँची व पवित्र बुद्धि नहीं नीच विचार हैं। जब तेरे हृदय में इतना मैल है तो परमात्मा के साथ तेरा कैसे प्यारा हो सकता है? किसी को बुरा मत समझो। सभी के अन्दर परमात्मा की ज्योति देखने की कोशिष करो। यदि नफरत करनी है, तो बुरे कामों से करो. किसी व्यक्ति से नहीं।"

गुरू जी ने कहा, "यह ठीक है कि तुमने रसोई पवित्र कर ली है, लकड़ियाँ धो ली हैं। लकीर डाल दी है, पर इसका क्या लाभ, यदि मन को पवित्र नहीं किया। मन तीर्थों पर स्नान करने से पवित्र नहीं होता। परमात्मा की स्तुति करने से पवित्र होता है। सच्चा आचरण बनाना ही सच्ची लकीर लगाना है।

जब साधु ने गुरू जी के उत्तम वचन सुने तो उसका मन जाग पड़ा। उसे समझ में आ गया कि सारे अवगुण उसी के अन्दर हैं। वह गुरू जी के चरणों में गिर पड़ा व सिखी धारण की।

शिक्षा :—बाहर की पवित्रता रखने से परमात्मा की प्राप्ति नहीं होती। परमात्मा तभी मिलता है यदि मन पवित्र हो। मन में कोई बुरी भावना न हो। परमात्मा सभी में व्याप्त है। पवित्र मन से ही उसके दर्शन हो सकते हैं।

———

कलियुग पाण्डे का सुधार

गुरू नानक देव जी, गुरमत का प्रचार करते हुये जगन्नाथपुरी जा पहुँचे। यहां एक 'कलियुग' नामक पंडित रहता था। यह पंडित भोले-भाले लोगों को ठगता था। अनेकों पाखण्डी साधुओं की तरह वह समाधी लगा कर बैठ जाता था, और काफी श्रद्धालु उसके समीप इकट्ठे हो जाते थे। उसने अपने सामने एक लोटा रखा हुआ था, जिसमें उसके श्रद्धालु पैसे डाल रहे थे। यह पंडित कभी आंखे मूंद लेता था, कभी खोल लेता था। कभी हाथ से नाक की एक नासिका बंद कर लेता और कभी दूसरी। कभी कह उठता मुझे स्वर्ग में भगवान के दर्शन हो रहे हैं, कभी ब्रह्मपुरी की बातें करता, कभी शिवपुरी की और कभी विष्णुपुरी की। यह सब था तो धोखा ही। श्रद्धालु चुपचाप उसकी बातें सुनते जा रहे थे, तथा साथ ही साथ हैरान भी हो रहे थे। फिर पंडित कहने लगा कि तुम लोग भी आंखे मूंद कर स्वर्ग का ध्यान करो, मैं तुम्हें भी दर्शन करवा देता हूँ।

गुरू नानक देव जी भाई मर्दाना के साथ वहां बैठे थे। गुरू जी पंडित का सारा पाखंड देख रहे थे। वह जानते थे कि पंडित लोगों को मूर्ख बना रहा है। जब पंडित के कहने पर सभी ने आंखें मूंद लीं तो गुरू जी ने भाई मर्दाना का इशारा किया कि वह पंडित का लोटा उठा ले और उसे पाछे छिपा दे। भाई मर्दाना ने इसी तरह किया।

कुछ देर बाद जब पंडित ने आंखे खोलीं तो उसने देखा कि लोटा तो गायब है। उसने बहुत शोर मचाया बड़े क्रोध में कहने लगा, "मेरा लोटा किसने उठाया है। सन्तों के साथ मजाक ठीक नहीं। हम पैसे का लालच नहीं करते," इत्यादि। वास्तव में बात तो लोटे की ही थी।

सभी देखने वाले हैरान हो गए। पंडित का शोर सुन कर और लोग भी इकट्ठे हो गये। अत: गुरू जी ने देखा कि मौका ठीक बन गया है। गुरू जी ने पंडित से कहा "पंडित जी, तुम्हें तो त्रिलोकी के दर्शन हो रहे थे। तुम तो भगवान के दर्शन कर रहे थे। तुम खुद ही देखो

शायद कहीं तुम्हें अपना लोटा नजर आ जाये।" गुरू जी की यह बात सुन कर उसे और भी गुस्सा आया। इकट्ठे हुये लोगों में से कुछ ने कहा, तुम्हारी नजर स्वर्ग तक जा सकती है, तो लोटा नजर क्यों नहीं आ रहा ?" पंडित बहुत शर्मिंदा हो रहा था। उसको कोई उत्तर नहीं सूझ रहा था। लोगों को पंडित के सारे पाखंड की समझ आ गई थी। गुरू जी ने पंडित के पाखंड का भंडा फोडते हुए बताया कि लोटा उसके पीछे ही पड़ा है।

गुरू जी ने लोगों को उपदेश दिया कि जो पाखण्डी, आंखें, नाक, कान आदि बन्द करके लोगों को ठगने के लिये समाधी लगाने का बहाना करते हैं, उन पर बिल्कुल विश्वास नहीं करना चाहिए। ऐसे व्यक्ति परमात्मा के संत नहीं होते बल्कि ठग होते हैं।

गुरू जी के पवित्र उपदेश सुन कर कलियुग पंडित गुरू जी के चरणों पर गिर पड़ा और गुरू जी का सिख बना। गुरू जी ने उसको सिख धर्म का उपदेश देकर प्रचारक बनाया।

शिक्षा :—हमें गुरू साहिब की बाणी के अनुसार सारे काम करने चाहिएं। जो पाखण्डी सन्त-साधु, कलियुग पंडित की भांति समाधी लगा कर पाखण्ड करते हैं, उनसे बच कर रहना चाहिये।

श्री गुरू अंगद देव जी

(दूसरी पातशाही)

गुरू जी की आज्ञा का पालन करने से एक मामूली इनसान भी महान बन सकता है, इसकी जानकारी गुरू अंगद साहिब के जीवन से मिलती है। आपका पहला नाम भाई लहणा जी था। आपका जन्म 31 मार्च, 1504 को मत्ते की सराय, जिला फिरोजपुर में हुआ। आपके पिता का नाम श्री फेरूमल जी व माता का नाम दया कौर जी था। सन् 1519 में आपकी शादी श्री देवीचन्द की सुपुत्री (माता) खीवी जी के साथ हुई। माता खीवी जी की गोद में दो पुत्रों, श्री दासू जी व श्री दातू जी, तथा दो पुत्रियों—बीबी अमरो व बीबी अनोखी ने जन्म लिया।

भाई लहणा जी पहले देवी के पुजारी थे। हर साल देवी के दर्शन को जाते थे। परन्तु वाहिगुरू के बारे उनको ज्ञान नहीं था।

एक बार उन्होंने गुरू जी के एक सिख, भाई 'जीधा' जी से गुरू जी की बाणी सुनी। भाई लहणा जी को बाणी बहुत मीठी लगी। मन प्रसन्न हो उठा। मन में विचार आया कि जिस गुरू जी की बाणी इतनी मीठी व सच्ची है, उससे जरूर मिलना चाहिए।

कुछ समय पश्चात जब भाई लहणा जी देवी दर्शनों को जा रहे थे, रास्ते में गुरू नानक साहिब के दर्शन करने गये। गुरू जी के दर्शन करने व उनके महान उपदेश सुनने से, भाई लहणा जी के मन को शान्ति आ गई। मन ऐसा प्रसन्न हुआ कि देवी के पास जाना भूल गए। गुरू नानक जी के घर के ही होकर रह गए।

गुरू जी के पास रहने से बाणी का आनंद लेने लगे। बाणी पढ़ने से वाहिगुरू के बारे में समझ आने लगी। सच्ची बातों का पता लगने लगा। मन का भ्रम दूर होने लगा। समझ आ गई कि देवी में कोई ताकत नहीं। गुरू समर्थ है। गुरू ही सब कुछ कर सकता है। देवी का गुणगान उनको व्यर्थ लगने लगा। अब वह बाणी पढ़ते थे। गुरू जी के उपदेश सुनते थे व उनको हर प्रकार की आज्ञा मानने के लिए तैयार रहते थे। अब भाई लहणा जी गुरू जी के प्यारे सिख बन गये।

गुरू नानक साहिब ने भाई लहणा जी की परीक्षा लेनी चाही। एक बार एक कटोरा गंदे नाले में गिर पड़ा। गुरू जी ने कटोरा निकालने के लिए अभी इशारा ही किया था कि भाई लहणा जी ने एक-दम कपड़ों सहित नाले में छलांग लगा दी और कटोरा निकाल लाए। वह बड़े अमीर घर के थे व उस समय कीमती वस्त्र पहने हुये थे। कपड़ों की परवाह उन्होंने बिल्कुल नहीं की। उनके लिए गुरू जी की आज्ञा ही सब कुछ थी।

एक बार गुरू जी करतारपुर अपने खेतों में से घास निकाल रहे थे। घास की ढेरी में से कीचड़ चू रहा था। अचानक भाई लहणा जी आ गए। गुरू जी ने भाई लहणा जी को घास की ढेरी उठाने का आदेश दिया। भाई लहणा जी ने 'सत्यवचन' कह कर ढेरी सिर पर उठा ली व घर की ओर चल पड़े। उन्होंने बड़े कीमती वस्त्र पहने

हुए थे। घास में से गंदा पानी चूने से भाई लहणा जी के सारे वस्त्र खराब हो गए। फिर भी वह बहुत खुश थे, क्योंकि उन्होंने गुरू जी की आज्ञा का पालन किया था। इस तरह गुरू जी जब भी कोई आज्ञा देते, वे उसे सत्य-वचन मानते। गुरू जी इसीलिए उनसे प्रसन्न थे। भाई लहणा जी गुरू जी के प्यारे सिख थे। गुरू नानक साहिब ने प्रसन्न होकर उनको अपने अंग से लगा लिया। भाई लहणा जी को गुरू अंगद साहिब बना दिया। गुरू-गद्दी प्रदान की। इस तरह गुरू अंगद साहिब जी हमारे दूसरे गुरू बने। यह गुरू आदेश-पालन, व नम्रता का फल था। वे अपनी समझ को तथा गुरू जी के आदेश को सच्चा समझते थे। हम सब का भी यही कर्त्तव्य है कि गुरू आज्ञा पर चलें। 29 मार्च सन् 1552 को गुरू अमरदास जी को गुरूगद्दी प्रदान करके आप गुरपुरी सिधार गए।

शिक्षा :--इस कथा से हमें यह शिक्षा मिलती है कि हमें भी भाई लहणा जी की तरह, गुरू साहिब के प्रत्येक आदेश का पालन करना है। अब हमारे गुरू, श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी हैं। गुरू जी के सभी आदेश गुरबाणी में शामिल है। हमें भी वही करना है जो गुरबाणी में लिखा है। गुरबाणी ही हमारा सच्चा गुरू है।

श्री गुरू अमर दास जी

(तीसरी पातशाही)

श्री गुरू अमरदास जी का जन्म गाँव बासरके, जिला अमृतसर में, 5 मई सन् 1479 को हुआ। आपके पिता का नाम श्री तेजभान था। आपकी माता का नाम, सुलखणी (लक्ष्मी) जी था। आपका विवाह श्री देवी चंद जी की सुपुत्री राम कौर जी के साथ, सन् 1502 हुआ। उनकी कोख से दो पुत्रों –बाबा मोहन जी व बाबा मोहरी जी तथा दो पुत्रियों, बीबी दानी व बीबी भानी ने जन्म लिया।

श्री अमरदास जी हर वर्ष गंगा की तीर्थ यात्रा करने जाया करते थे। आपने 20 बार गंगा की यात्रा की। एक बार आप यात्रा

से वापिस आ रहे थे कि रास्ते में एक वैष्णव साधु आपका साथी बन गया। कुछ समय उसके साथ यात्रा करते आए। एक दिन उसने आपसे पूछा कि आपका गुरू कौन है ? आपने उत्तर दिया हमने आज तक कोई गुरू धारण नहीं किया। यह सुनकर वह कहने लगा, "मैं तुम 'निगुरे' (बिना गुरू के) के हाथों से खाता-पीता रहा हूं। मेरे सारे व्रत नियम, तीर्थ-स्थान, धर्म-कर्म नष्ट हो गए हैं। 'निगुरे' का दर्शन बुरा होता है। यह कहकर वैष्णव साधु तो चलता बना, पर आप पर इस घटना का बहुत बड़ा असर हुआ। आपके मन में गुरू धारण करने की लालसा पैदा हो गई। आप कई संतों-साधुओं को मिले पर कहीं भी शांति प्राप्त नहीं हुई।

गुरू अंगद देव जी की सुपुत्री बीबी अमरो की शादी अमरदास जी के भतीजे के साथ हुई थी। एक दिन सुबह सवेरे वह दूध बिलो रही थी और साथ ही साथ गुरबाणी का पाठ बड़ी मधुर तान से पढ़ रही थी। श्री अमरदास जी उनका पाठ ध्यान से सुनने लगे। उनके मन में लालसा पैदा हुई कि जिस महापुरुष की यह बाणी है, उसके दर्शन किए जाएँ। वह बीबी अमरो को साथ लेकर गुरू अंगद देव जी के दर्शन करने खडूर साहिब पहुंचे। दर्शन किए, चरण छुए, मन को शांति मिली। वह सिखी की शरण प्राप्त कर गदगद हुए। उस समय आपकी आयु 62 वर्ष की थी और गुरू अंगद देव जी की आयु 36 वर्ष की थी।

सिखी की शरण प्राप्त करके श्री अमरदास जी वापिस घर नहीं गए। खडूर साहिब में डेरा डाल कर तन व मन से गुरू अंगद देव जी की सेवा करनी आरम्भ की। आप आधी रात को उठ कर, पानी का कलश लेकर, तीन कोस की दूरी से गुरू अंगद देव जी को नहलाने के लिए पानी लाया करते थे। यह आपकी नित्य प्रति की क्रिया बन गई थी। वृद्ध शरीर होने के कारण कई बार अंधेरे में ठोकरें भी लग जातीं। प्रेम की तरंग न जानने वालों ने उनकी ठोकरों पर कई बार हँसी भी उड़ाई, पर लोगों का हँसी-मजाक आपको अपने प्यारे गुरू की सेवा से हटा न सका।

गुरू अंगद देव जी को स्नान करवाने से निवृत होकर आप दिन-

रात लोगों की सेवा में लगे रहते। मुंह से गुरू की वाणी का पाठ करते व सतिनाम का जाप करते रहते। हर समय गुरु जी के आदेश को मानने के लिए तत्पर रहते। 29 मार्च सन् 1552 को गुरू अंगद देव जी ने गुरपुरी सिधारने से पूर्व आपको गुरुगद्दी के योग्य समझ कर, गुरुगद्दी सौप दी। अब आप गुरू अमरदास जी के नाम से सिखों के तीसरे गुरू माने जाने लगे। आप ने सिखों के प्रचार का केन्द्र खडूर साहिब की जगह अब गोइंदवाल साहिब जाकर बनाया। गुरू अंगद साहिब के आदेशानुसार आपने ब्यास नदी के किनारे पर यह नगर बसाया।

गुरू अंगद साहिब के पुत्र दातू जी व दासू जी, गुरु अमरदास जी को मिली गुरुगद्दी सहन नहीं कर सके। दुर्वचन बोलने लगे। उन्होंने आपको लात मारी पर आप स्वयं उठकर दातू जी के चरण दबाने लग पड़े व कहने लगे, 'मेरा वृद्ध शरीर सख्त है, आपके चरण कोमल हैं, इनको चोट लगी होगी।' फिर आप बासरके पहुंच कर एक बंद कोठड़ी में बैठकर सुमिरन करने लगे। बाबा बुड्ढा जी ने गुरू जी को जा ढूंढा व बिनती की कि संगतों को दर्शन दें। गुरू जी बाहर आए व संगता के साथ वापिस गोइंदवाल साहिब पहुंच गए।

गुरू अमरदास जी ने लोगों में से जात-पात, छूत-छात आदि को बिल्कुल खत्म करने के लिए आदेश दिया। उन्होंने कहा, जो भी हमारे दर्शनों के लिए आए, वह पहले लंगर में प्रसाद ग्रहण करें। सभी लोग बिना किसी भेदभाव के, एक पंक्ति में बैठकर भोजन किया करते। अकबर बादशाह ने भी पंक्ति में बैठकर भोजन ग्रहण किया था।

सती प्रथा बंद करने की ओर गुरू जी ने विशेष ध्यान दिया। इस प्रथा के अनुसार स्त्री को अपने मृतक पति की चिता में कूदकर जिन्दा जलकर मर जाना पड़ता था। गुरू जी ने इसका डटकर विरोध किया। आपने घूंघट निकालने व पर्दे की प्रथा का भी विरोध किया। संगत में सभी स्त्रियां-लड़कियां खुले मुंह आती थीं। मरने के पश्चात् बहुत से कर्म-कांड किये जाते थे। गुरू जी ने सभी को समाप्त करवाया। जनता के सुख-आराम के लिए गोइंदवाल साहिब में एक जलकुंड बनवाया, जिसे बाउली साहिब कहते हैं।

गुरसिखी के प्रचार का पक्का प्रबंध करने के लिए आपने सारे

क्षेत्र को बाईस भागों में बांटा । प्रत्येक भाग के लिए एक मुखिया सिख प्रचारक नियुक्त किया गया । इनको बाईस मंजियों का नाम दिया गया । इसका नतीजा यह हुआ कि सभी जाति बिरादरियों के लोग धड़ाधड़ सिख बनने लगे । हिन्दू ही नहीं बल्कि मुसलमान भी बहुत बड़ी संख्या में गुरू जी के सिख बने ।

आप जी ने अपनी सुपुत्री बीबी दानी जी की शादी भाई रामा नामे, एक साधारण सिख के साथ की, व बीबी भानी के लिए घुंघनी (उबला अनाज) बेचने वाले यतीम नौजवान, श्री जेठा जी को, बिना किसी जात-पात की छानबीन किए योग्यता के आधार पर चुना । श्री जेठा जी ने अपनी भक्ति, प्रेम व सेवा से गुरू जी को ऐसा खुश किया कि वह गुरू जी को भा गए । हर परीक्षा में भाई जेठा जी पूरे उतरे व हर तरह गुरूगद्दी के योग्य साबित हुए । पहली सितम्बर सन् 1574 को गुरू अमरदास भाई जेठा जी के आगे मस्तिष्क झुका कर गुरपुरी सिधार गए । इसी तरह भाई जेठा जी गुरू रामदास बन कर हमारे चौथे गुरू बने ।

शिक्षा :—गुरू की सेवा से हो सब कुछ प्राप्त होता है । तीर्थ-स्नान मनुष्य को शांति व प्रसन्नता नहीं दे सकते । सेवा करते समय अहंकार को दिल से निकाल देना चाहिए । सिख धर्म में जात-पात वर्जित है, इसीलिए सिखों के लिए रिश्ते करते समय जात पात पूछनी गुरू के आदेशों के विपरीत है । सिख स्त्रियों के लिए घूंघट निकाल कर संगत में आना मनमानी है अर्थात गुरू की आज्ञा का उलंघन है ।

—o—

श्री गुरू रामदास जी

(चौथी पातशाही)

श्री गुरू रामदास जी का जन्म लाहौर शहर (पाकिस्तान) के बाजार चूना मंडी में 24 सितम्बर सन् 1534 को हुआ । आपके पिता का नाम हरदास जी, व माता का नाम दया कौर जी था । आप क्योंकि

माता पिता की पहली संतान थे, इसलिए सभी आपको 'जेठा' करके पुकारने लगे और आपका नाम जेठा प्रसिद्ध हो गया। आप अभी बहुत ही छोटी उम्र के थे कि आपकी माता जी का निधन हो गया। सात वर्ष की आयु में इनके पिता, हरदास जी का निधन हो गया। आपके नाना-नानी गांव बासरके में रहते थे। आपकी नानी जी आपको बासरके ले आई। बासरके में (गुरू) अमरदास आपको मिले। उन्होंने इनको हौंसला दिया।

'बासरके' में आकर आपने छोटी उम्र में घुंघनियां (गेहूं उबाल कर) बेचनी आरम्भ कर दीं। पांच साल नानी जी के पास रहे। सन् 1546 में (गुरू)अमरदास जी ने गुरू अंगद साहिब के आदेश से गोइन्दवाल नगर बसाया और अपने भाई रिश्तेदारों को गोइन्दवाल ले आए। जेठा जी भी अपनी नानी के साथ गोइंदवाल आ बसे। इस समय आपकी उम्र 12 साल की थी। गोइन्दवाल आकर घुंघनियां बेचने का कार्य जारी रहा। (गुरू) अमरदास जी के साथ निकटता बढ़ती गयी। सन् 1552 में गुरू अमरदास जी को गद्दी प्राप्त हुई। सन् 1553 में अमरदास जी ने अपनी सुपुत्री बीबी भानी की शादी भाई जेठा जी के साथ कर दी।

आपकी आयु उस समय 19 साल की थी। बीबी भानी जी के उदरसे बाबा पृथ्वी चंद, बाबा महादेव व गुरू अर्जुन साहिब का जन्म हुआ।

जब गुरू अमरदास जी के विरुद्ध कुछ पाखंडी व जाति अभिमानियों ने अकबर बादशाह से शिकायत की, तो गुरू अमरदास जी के आदेश पर गुरू रामदास जी लाहौर गये और अकबर को सिख धर्म का आदश, ऐसे मीठे व सही ढंग से पेश किया कि वह बहुत ही प्रभावित हुआ।

आप भले ही, गुरू अमरदास जी के रिश्ते में दामाद लगते थे परन्तु सभी सांसारिक रिश्ते भूल कर, गुरू के सिख होकर गुरू की सेवा करते रहे। जब गोइन्दवाल बाउली (जल कुंड) की सेवा हुई तो आपने बाकी सिखों की तरह टोकरी उठाने, मिट्टी ढोने आदि की सेवा की। आपके रिश्तेदारों ने कई व्यंग भी किये पर आप ने किसी की भी परवाह नहीं की।

आपने सेवा करके गुरु अमरदास जी का मन जीत लिया। सिख बाशय को पूरी तरह समझ लिया व अपना जीवन सिखी सांचे में ढाल लिया। एक बार गुरु अमरदास जी ने आपकी व दूसरे दामाद, भाई रामा जी से फर्श बनाने को परीक्षा ली। आप उस परीक्षा में पास हो गये।

गुरु रामदास जी ने सिखी के प्रचार को बढ़ता हुआ देख, यह फैसला किया कि धर्म प्रचार का केन्द्र गोइन्दवाल से बदल दिया जाय। माझे में जगह पसंद करके (जिस जगह अब अमृतसर है) गुरु अमरदास जी ने (गुरु) रामदास जी को 'गुरु का चक्क' बसाने का कार्य सौंपा। आपने बाबा बुड्ढा जी को साथ लेकर पहले सरोवर की खुदाई की। सन् 1574 में नगर की नीवें रखी, जिसका नाम 'गुरु का चक्क, रखा गया। गुरु अर्जुन देव ने बाद में गांव का नाम 'चक्क रामदास' अथवा 'रामदास पुर' रख दिया।

गुरु अमरदास जी ने अगस्त सन् 1574 को सारी संगत व अपने सारे परिवार के सम्मुख गुरु रामदास जी को गुरुगद्दी प्रदान की। जब गुरु अमरदास जी गुरु रामदास जी के आगे नतमस्तक हुए तो आप वैराग में बोल उठे, "पातशाह! आप जानते हैं कि मैं लाहौर की गलियों में अनाथ फिरता था। मुझ जैसे अनाथ को आश्रय देने को कोई तैयार न था। पातशाह! यह आपकी कृपा है कि आपने मुझ कीड़े को प्यार से देखा व मुझ अनाथ को आज आसमां पर पहुंचा दिया है।"

गुरु रामदास जी ने गुरु बनने के पश्चात् माझे में सिखी के प्रचार पर जोर दिया। 22 मंजियों के अलावा मसंद प्रथा आरम्भ की। पवित्र व चरित्रवान गुरु के सिख, मसंद की सेवा निभाने लगे। 'दसवंध' (कमाई का दसवां हिस्सा) इकट्ठा करके गुरु जी को पहुंचाना व सिखी का प्रचार करना, मसंदों का काम था।

गुरु के चक्क में लोगों को बसाना शुरु किया गया। अत: इसलिए आपने जगह-जगह भिन्न-भिन्न व्यवसाव के लोगों को बुलाकर यहाँ बसाया। हर तरह का कार्य-विहार गुरु के चक्क में होने लगा। सन् 1577 में आपने दुःख भंजनी बेरी के पास एक तालाब (अमृतसर) खुदवाया जिसको बाद में गुरु अर्जुन देव जी ने पूरा करवाया।

गुरू रामदास जी के तीन पुत्र थे। सबसे बड़े पुत्र, बाबा पृथ्वी चँद जी आम काम-काज में, आय व्यय के हिसाब में तथा अतिथि सेवा में प्रवीण थे पर आत्मिक गुणों से अनभिज्ञ थे। दूसरे बेटे, श्री महादेव जी मस्त स्वभाव के मालिक व उपराम वृत्ति के थे। किसी कार्य में रुचि नहीं रखते थे। तीसरे पुत्र (गुरू) अर्जुन देवजी में गुरसिखों वाले सभी गुण विद्यमान थे। वह हर तरह से योग्य थे। इसलिए गुरू रामदास जी ने जुलाई सन् 1581 को गुरू अर्जुन देव जी को गुरगद्दी प्रदान की व स्वयं सितम्बर सन् 1581 को गुरपुरी सिधार गए।

श्री गुरु अर्जुन देव जी

(पांचवीं पातशाही)

श्री गुरू अर्जुन देव जी का जन्म 15 अप्रैल सन् 1563 को गोइंदवाल में, गुरू रामदास जी के घर माता भानी जी के उदर से हुआ। 11 वर्ष की आयु तक वे गोइन्दवाल ही रहे। उन्हें नाना गुरू अमरदास जी से गुरमत की लगन लगी व गुरसिखी में परिपक्व हुए। जब गुरू अमरदास गुरपुरी सिधार गए तो आप, पिता गुरू रामदास जी के साथ गुरू के चक्क में आ गये। 18 वर्ष की आयु में गुरु रामदासजी ने आपको योग्य जानकर, गुरुगद्दी सौंप दी। उन्होंने पहले चार गुरुओं व भक्तों की गुरबाणी की संपति भी उन्हें सौंप दी। इससे बाबा पृथ्वी चंद नाराज हो गये। वह आयु में बड़े होने के कारण गुरुगद्दी पर अपना अधिकार समझते थे।

सितम्बर 1581 को गुरु रामदास जी, गोइन्दवाल जाकर गुरपुरी सिधार गए। दस्तारबंदी की रसम के समय संगत इकट्ठी हुई। भट्ट भी दर्शन करने आए। इन्होंने सभी गुरुओं के व्यक्तित्व की प्रशंसा की व सवैये का गायन किया जो गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित है।

गुरु जी वापिस गुरु के चक्क में आ गए। पृथी चंद ने बहुत विरोध किया। गुरु जी शांत रहे। अमृतसर की सेवा आरम्भ करवायी गई। लोगों को दसवंध (कमाई का दसवां हिस्सा) देने के लिए प्रेरित किया। सन्

गुरू रामदास जी के तीन पुत्र थे। सबसे बड़े पुत्र, बाबा पृथ्वी चँद जी आम काम-काज में, आय व्यय के हिसाब में तथा अतिथि सेवा में प्रवीण थे पर आत्मिक गुणों से अनभिज्ञ थे। दूसरे बेटे, श्री महादेव जी मस्त स्वभाव के मालिक व उपराम वृत्ति के थे। किसी कार्य में रुचि नहीं रखते थे। तीसरे पुत्र (गुरू) अर्जुन देवजी में गुरसिखों वाले सभी गुण विद्यमान थे। वह हर तरह से योग्य थे। इसलिए गुरू रामदास जी ने जुलाई सन् 1581 को गुरू अर्जुन देव जी को गुरगद्दी प्रदान की व स्वयं सितम्बर सन् 1581 को गुरपुरी सिधार गए।

श्री गुरु अर्जुन देव जी

(पांचवीं पातशाही)

श्री गुरू अर्जुन देव जी का जन्म 15 अप्रैल सन् 1563 को गोइंदवाल में, गुरू रामदास जी के घर माता भानी जी के उदर से हुआ। 11 वर्ष की आयु तक वे गोइन्दवाल ही रहे। उन्हें नाना गुरू अमरदास जी से गुरमत की लगन लगी व गुरसिखी में परिपक्व हुए। जब गुरू अमरदास गुरपुरी सिधार गए तो आप, पिता गुरु रामदास जी के साथ गुरू के चक्क में आ गये। 18 वर्ष की आयु में गुरु रामदासजी ने आपको योग्य जानकर, गुरुगद्दी सौंप दी। उन्होंने पहले चार गुरुओं व भक्तों की गुरबाणी की संपति भी उन्हें सौंप दी। इससे बाबा पृथ्वी चंद नाराज हो गये। वह आयु में बड़े होने के कारण गुरुगद्दी पर अपना अधिकार समझते थे।

सितम्बर 1581 को गुरु रामदास जी, गोइन्दवाल जाकर गुरपुरी सिधार गए। दस्तारबंदी की रसम के समय संगत इकट्ठी हुई। भट्ट भी दर्शन करने आए। इन्होंने सभी गुरुओं के व्यक्तित्व की प्रशंसा की व सवैये का गायन किया जो गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित है।

गुरु जी वापिस गुरु के चक्क में आ गए। पृथी चंद ने बहुत विरोध किया। गुरु जी शांत रहे। अमृतसर की सेवा आरम्भ करवायी गई। लोगों को दसवंध (कमाई का दसवां हिस्सा) देने के लिए प्रेरित किया। सन्

थी, जिसमें प्रतिदिन सतसंग की मर्यादा कायम की।

अमृतसर वापिस आते समय बाल (गुरु) हरगोबिंद जी को चेचक (सीतला) निकल आई। कुछ हिन्दु श्रद्धालु भी बच्चे की खबर लेने आए। कई लोगों ने कहा कि शीतला देवी के मन्दिर में प्रसाद चढ़ाओ। गुरु जी ने भ्रम में फंसे लोगों को समझाया कि 'सीतला' कोई देवी नहीं है। यह तो बीमारी है, जिसका इलाज करना चाहिए।

श्री हरिमन्दर साहिब के निर्माण के बाद गुरु साहिब ने गुरु ग्रंथ साहिब के संपादन का कार्य आरंभ करवाया। सभी गुरुओं व भक्तों की बाणी उनके पास थी। उन्होंने इस कार्य के लिए भाई गुरदास जी को सेवा सौंपी। भाई गुरदास जी ने रामसर सरोवर के किनारे बैठकर यह सेवा निभाई व गुरु ग्रंथ साहिब की 'आदि-बीड़' की स्थापना हरिमन्दर साहिब में सन् 1604 में करा दी। बाबा बुड्ढा जी को पहला ग्रंथी बनाया गया।

सिख धर्म की प्रचारक लहर के फलस्वरुप हिन्दू व मुसलमान, सिख धर्म ग्रहण करने के लिए प्रेरित हुए। बहुत से मुसलमान सिख बने। यह बात कट्टर शरई मुसलमानों व मौलवियों के लिए बहुत दु:खदायी थी। शेख अहमद सरहदी व शेख फरीद बुखारी जैसे कट्टर मुसलमानों ने जहांगीर का साथ देकर उसको अकबर के पश्चात् राजगद्दी पर बिठाया। उन्होंने सारा जोर लगाकर उसके कान भरे कि सिखी की इस लहर को खत्म करना चाहिए। इस कार्य में पृथी चंद, चन्दू, बीरबल आदि गुरू घर के विरोधियों ने भी आवश्यकता अनुसार हिस्सा लिया। जहांगीर ने खुसरो की बगावत के समय, गुरु जी पर खुसरो की सहायता करने का झूठा आरोप लगाकर गुरु अर्जुन देव जी को शहीद करने का आदेश दे दिया। 30 मई, 1606 को गुरु अर्जुन देव जी को असह्य कष्ट देकर शहीद कर दिया गया।

अहलकार चंदू ने गुरू अर्जुन साहिब को उबलते पानी की कड़ाही में बिठाया। फिर नंगे शरीर पर बहुत ही गर्म रेत डलवायी। उनको गर्म लोह पर बिठाकर नीचे आग लगा दी। सतगुर जी का सारा शरीर इन कष्टों से छलनी-छलनी हो गया, पर आप इसे अकाल पुरख का आदेश मानकर, अडिग रहे। इन भयायक कष्टों के बाद गुरू जी को रावी नदी के ठण्डे पानी में जल प्रवाह कर दिया गया और गुरु

जा शहीद हो गये। इस तरह गुरु अर्जुन साहिब सिख धर्म को महानता चोटी पर पहुंचाकर शहीद हो गए। शहीद होने से पहले उन्होंने गुरु हरगोबिंद साहिब को गुरुगद्दी पर बिठा दिया था।

भाई मंझ

भाई मंझ गांव कंग भाई, होशियारपुर का रहने वाला था। यह सखी, सरवर (आधा हिन्दू आधा मुसलमान) का पुजारी था। उसने अपने घर एक पीरखाना (कब्र) भी बनवाया हुआ था जिस पर वह हर बृहस्पतिवार को नियम से मोटी रोटी का चढ़ावा चढ़ाता था। श्रद्धालुओं को साथ लेकर हर वर्ष निगाहे गांव जाया करता था, जहां इनके मुखिया की कब्र थी।

सन् 1585 की बात है कि भाई मंझ जत्थे सहित निगाहे से होकर वापिस गांव जाते हुए, अमृतसर ठहर गया। अमृतसर में गुरू अर्जुन देव जी महाराज के दर्शन किए। संगत में गया। गुरबाणी का कीर्तन सुना। मन में शांति आ गई। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि वहां मन को सच्चे सुख की प्राप्ति हो सकती है। भाई मझ ने सतगुर जी की सिखी का दान मांगा। गुरु साहिब ने उत्तर दिया, "सिखी के ऊपर सिखी नहीं टिक सकती" पहले अपने घर जाकर पीरखाना गिराओ, सखी सरवरियों की पूजा छोड़ो। सिखी के विपरीत सभी कार्य करने बंद कर दो, तभी तुम सच्चे सिख बन सकते हो।"

भाई मंझ ने उसी तरह किया। उसने अपने घर जाकर पीर की कब्र गिरा दी। रोट (मीठी रोटी) पकाने बंद कर दिये। जमीन पर सोना बंद कर दिया। धागे-तवीत लेने-देने त्याग दिए व गुरु जी के पास आ गया। गांव के सभी लोग सखी सरवर थे। वे उसके दुश्मन बन गए। लोगों ने उसे मुखिया के पद से हटा दिया। उसने किसी की भी परवाह नहीं की। वह सेवा में जुट गया। सिखी की कमाई करने लगा। उसने अपने जिम्मे लंगर के लिए लकड़ियां लाने की सेवा ले ली। प्रतिदिन वाहिगुरु का सुमिरन करता। गुरु जी का उपदेश

सुनकर हृदय में बसाता। जंगल में से लंगर के लिए लकड़ियां लाता।

एक दिन लकड़ियां सिर पर रखकर अमृतसर को आ रहा था कि तेज अंधेरी आ गई। भाई मंझ जी लकड़ियां सम्भाल कर चल रहे थे कि एक कुएँ में गिर पड़े। कुआं बहुत गहरा नहीं था व पानी भी कम ही था। भाई जी ने लकड़ियों को सिर पर धरे रखा ताकि वे गीली न हो जाएँ। कुएँ में खड़े, आप गुरबाणी का पाठ करने लगे। एक जमींदार अपने खेतों को देखते हुए कुएँ पर पहुंचा। उसने भाई मंझ जी को आवाज सुनी। शहर जाकर उसने गुरु अर्जुन देव जी को सूचना दी। गुरु साहिब सिखों सहित कुएँ के पास पहुंचे, रस्सा नीचे लटका कर आवाज दी, "भाई मंझ जी, रस्सा पकड़ कर बाहर आ जाओ।" भाई मंझ जी ने उत्तर दिया, "पहले लकड़ियों को बाहर निकालो ताकि लंगर तैयार हो सके।" इसी तरह ही किया गया। फिर भाई मंझ जी बाहर आए। गुरु जी ने भाई मंझ जी को अपने सीने के साथ लगाया और कहा, "आप सिख की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हो" गुरु जी ने कहा :

मंझ प्यारा गुरु को गुरु मंझ प्यारा ॥
मंझ गुरु का बोहिथा जग लंघन हारा ॥"

गुरु जी ने भाई मंझ जी को सिख धर्म के प्रचार के लिए, होशियारपुर अपने घर भेज दिया। भाई जी ने घर पहुंच कर संगत कायम की। लंगर चलाया व सिख धर्म का प्रचार किया।

शिक्षा :—इस कथा से हमें यह शिक्षा मिलती है कि सिखों को एक अकालपुरुख के अतिरिक्त देवी देवताओं व पीरों आदि की पूजा नहीं करनी चाहिए। गुरु जी के आदेश के अनुसार ही जीवन व्यतीत करना चाहिए। हमें सिख धर्म की शिक्षाओं के विपरीत कोई बात नहीं करनी चाहिए। कब्रों के आगे प्रणाम नहीं करना है। तीर्थ यात्रा नहीं करनी। सन्तों साधुओं व देहधारी गुरुओं को प्रणाम नहीं करना। केवल गुरु ग्रंथ साहिब को ही प्रणाम करना है।

———

भाई कल्याणा जी

सन् 1590 की बात है, जब अमृतसर हरिमंदर साहिब की इमारत बन रही थी। गुरु अर्जुन देव जी ने अपने सिख भाई कल्याणा जी को इमारती लकड़ी लेने के लिए रियासत मंडी हिमाचल प्रदेश में भेजा। वहां का हिन्दु राजा हरि सैन था। वह ब्राह्मणी करम-कांड करता था तथा स्वयं व्रत रखता था। वह सारी प्रजा से भी सरकारी तौर पर व्रत रखवाता था।

भाई कल्याणा जी जब वहां पहुंचे तो जन्माष्टमी के दिन थे। सरकारी ऐलान के अनुसार सबको व्रत रखने के लिए कहा गया। सबने राजा का आदेश मानकर व्रत तो रखना ही था। पर भाई कल्याणा जी ने व्रत नहीं रखा बल्कि हिन्दुओं को भी व्रत छोड़ने के लिए प्रेरणा दी। खुले मैदान में लंगर तैयार किया व छत पर जाकर आवाज लगाई, "गुरु का लंगर तैयार है, जिसने गृहण करना है, आकर कर ले।" इस बात की शिकायत राजा के पास पहुंची। राजा को बहुत गुस्सा आया। उसने भाई साहिब को बुला भेजा। भाई साहिब आगे ही इस मौके की इन्तजार में बैठे थे। वे बिल्कुल नहीं डरे। गुरबाणी की सच्चाई सिख को निडर बना देती है। राजा नें भाई साहिब से पूछा, आपने जन्माष्टमी का व्रत क्यों नहीं रखा ?

भाई कल्याणा जी ने उत्तर दिया, कृष्ण की मूर्ति आपने स्वयं बनाई है। मूर्ति पत्थर की है, आप सभी इसकी पूजा करते हैं। सारा दिन स्वयं भूखे रहकर कृष्ण की मूर्ति को अन्न खिलाते हैं, फिर स्वयं खाते है। पत्थर की मूर्ति को अन्न खिलाना मूर्खता है। मूर्ति कुछ नहीं खा सकती। मेरे गुरु ने तो यह उपदेश दिया है कि परमात्मा हर जगह व्याप्त है। मूर्ति तो मनुष्य ने स्वयं बनाई है। मूर्ति में भगवान नहीं। कोई दिन अच्छा या बुरा नहीं सभी दिन एक जैसे होते हैं। व्रत रखना तो पाखण्ड है, यह भगवान की पूजा का उचित तरीका नहीं बल्कि शरीर को दुःख देने का कारण है। गुरु जी कहते हैं। :—

अन्न न खाए देहि दुख दीजै।
बिन गुरु ज्ञान तृप्त नहीं थीजै ॥ (रामकली महला १)

भाव :- "गुरू के सच्चे ज्ञान के बिना मन को शांति नहीं मिल सकती। आप कहते हैं कि आज भगवान का जन्म दिन है। आपको भगवान की भी समझ नहीं आई। भगवान न पैदा होता है और न मरता है। कोई मनुष्य भगवान नहीं हो सकता।" राजा यह बातें सुनकर कहने लगा कि आपके वचन सत्य हैं किन्तु आपने मेरा आदेश नहीं माना, इसलिए आप दोषी हैं। आपको सजा मिलेगी। भाई साहिब ने उत्तर दिया, 'जैसे आदेश को न मानने वाले को आप दोषी समझते हैं। इसी तरह भगवान के सच्चे आदेश को न मानने के कारण आप भी दोषी हैं। भगवान तो सबको रोटी दे रहा है और आप रोटी बन्द करवा कर व्रत क्या रखवाते हैं? आप स्वय तो व्रत के समय दूध पेड़े खा लेते हैं पर बिचारे गरीब क्या करें? क्या गरीब को भूखा रखना पाप नहीं है? जानबूझकर अन्न न खाना, नासमझी है और पाखंड भी। यह कोई धर्म की बात नहीं है।"

जब राजा ने भाई कल्याणा जी की ये सत्य व ज्ञान पर आधारित निर्भय बातें सुनीं, तो बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसे ब्राह्मणी मत के सभी कर्म कांड फोकट लगने लगे। राजा के मन में विचार उठा कि मैं भी ऐसे सतिगुरू के दर्शन करुं। उसने भाई कल्याणा जी को अपने दिल की बात कही। भाई कल्याणा जी राजा को साथ लेकर अमृतसर आए। राजा ने अपने साथियों सहित गुरु अर्जुन देव जी से सिखी ग्रहण की।

शिक्षा : इस कथा से हमें यह शिक्षा मिलती है कि सिख कभी व्रत नहीं रखता, सिख गुरु का आदेश मानता है व दूसरों को भी प्रेरणा देता है। अकाल पुरुख सर्वव्यापक व स्थाई है। वह जीवन-मृत्यु में कभी नहीं आता। गुरु का सिख गुरबाणी को समझकर पढ़ता है। सिख गुरबाणी की सच्ची बातों से लोगों को प्रभावित कर सिखी की ओर प्रेरित करता है।

——

सीतला

हिन्दू घरों में चेचक की बीमारी को सीतला माता या सीतला देवी कहते हैं। चेचक कोई माता या देवी नहीं है। यह एक सक्रांमक रोग है।

यह रोग एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को बहुत जल्दी लग जाता है। जब चेचक का इलाज नहीं था, तब इस बीमारी से हजारों लोगों की मृत्यु हो जाती थी। बच्चों पर इस बीमारी का बहुत जल्दी प्रभाव होता है। यह बीमारी प्राय: बरसात में होती है।

इस बीमारी से पहले कई दिन बुखार होता रहता है। फिर शरीर पर दाने निकल आते हैं और दानों में पानी भर जाता है। इस बीमारी से कई बार रोगी की आंखों या शरीर का कोई और अंग सदा के लिए खराब हो जाता है। महाराजा रणजीत सिंह की दायीं आंख बचपन में इसी बीमारी से खराब हो गयी थी।

बुद्धिमान लोग इस बीमारी का इलाज करते हैं। परन्तु वहमी और अनपढ़ हिन्दू लोग इसे 'माता' कह कर पुकारते हैं। वे समझते हैं कि सीतला माता आई हैं। वे चेचक को बीमारी नहीं मानते। वे डरते हैं कि अगर हमने बीमारी कहा तो माता नाराज हो जाएगी। वे बीमारी का कोई इलाज नहीं करते। बीमार के पास बैठकर माता की भेंट (स्तुति) गाते हैं। सीतला देवी के मन्दिर बनाकर रखते हैं। सीतला देवी का यह मन्दिर पानी के तालाब के किनारे बनाते हैं। मन्दिर से मिट्टी लाकर, जिसे ये लोग सीतला का प्रसाद समझते हैं, पानी से गीली करके, बीमार के दानों पर लगाते हैं। इसके अलावा और कोई इलाज नहीं करते।

यह बीमारी आम तौर पर बरसात के मौसम में होती है। इसलिए जब बादल गर्जते हैं, गड़गड़ करते हैं, तो मूर्ख लोग यह समझते हैं कि बादलों की आवाज से माता नाराज हो जायेगी। इसलिए छज्जों में ठीकरियां डाल कर रखते हैं। जब बादल गड़—गड़ करते हैं तो वहमी लोग छजों की ठीकरियों को जोर-जोर से बजाते हैं। वे समझते हैं कि इस प्रकार बादलों के गर्जने की आवाज माता को सुनाई नहीं पड़ेगी और माता नाराज नहीं होगी। पर यह सब अनपढ़ लोगों की मूर्खता है। कई लोग इस बीमारी से बचने के लिए माता के तीर्थ पर जाते हैं और देवी का जागरण भी करते हैं। पर इस तरह करने से बीमारी दूर नहीं होती।

एक बार लाहौर शहर में चेचक की बीमारी फैल गई। गलियां

और बाजार लाशों से भर गए। घर-घर में इस बीमारी का जोर था। गुरु अर्जुन देव जी लोगों की सहायता करने के लिए लाहौर आए। गुरु जी के साथ डेढ़ साल के बालक (गुरु) हरगोबिन्द जी भी थे। गुरु जी ने स्वयं अपने हाथों से लोगों की बड़ी सेवा की व लंगर लगा दिये। निःशुल्क दवाइयां बांटी और लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति की। सेवा का यह काम कई महीने चलता रहा। जब गुरु जी अमृतसर वापिस आए तो बालक (गुरु) हरगोबिन्द जी को भी चेचक निकल आई थी। कुछ वहमी लोग गुरु जी के पास आए तो वैसी ही सलाह दी जैसे वहम वे खुद करते थे। किसी ने सीतला मन्दिर में भी जाने के लिए कहा। गुरु जी ने उन वहमी लोगों को समझाया कि चेचक एक बीमारी है, यह कोई माता या देवी नहीं। देवियां देवते कोई चीज नहीं है। हमें एक वाहिगुरु को ही याद रखना चाहिए। चेचक केवल छूत की बीमारी है। इसलिए हमें इसका इलाज करना चाहिए। हमें वाहिगुरु के आदेश में रहना चाहिए। दुख सुख भगवान के आदेश हैं। गुरु जी ने शीतला देवी के खण्डन के लिये कई शब्द भी उच्चारण किये जो गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित हैं।

आजकल इस बीमारी के टीके लगाये जाते हैं। भारत में यह बीमारी समाप्त हो चुकी है। अब तो चेचक का रोगी बताने पर सरकार 1,000 रु. इनाम देती है। जब तक लोग चेचक को सीतला माता समझ कर इसकी पूजा करते रहे, लाखों लोग इससे मरते रहे। अब, जब सबको पता लग गया कि सीतला माता नहीं, चेचक की बीमारी है, जिसका इलाज हो सकता है, तो कोई बीमार नहीं मिलता।

शिक्षा :—चेचक एक बीमारी है, जिसका पूर्ण इलाज है। यह सीतला माता या देवी नहीं। देवी देवताओं का कोई अस्तित्व नहीं है। सब कुछ करने वाला एक अकालपुरख ही है।

———

श्री गुरु हरगोबिन्द साहिब जी

(छटी पातशाही)

गुरू हरगोबिन्द साहिब जी का जन्म 19 जून सन् 1595 को गांव वडाली जिला अमृतसर में, गुरु अर्जुन देव जी के घर, गंगा जी के उदर से हुआ। आपके ताऊ, बाबा पृथी चंद जी ने बचपन में आप पर बहुत घातक हमले किये। आपको मारने की चेष्टा की गई। पहले दाई को भेजा कि वह अपने स्तनों पर जहर लगाकर, बालक (गुरु) हरगोबिन्द साहिब को दूध पिलाए। पर आपने दूध नहीं पिया व उल्टा दाई पर जहर का असर होने लगा और वह मर गई। दूसरी बार पृथी चंद ने एक सपेरे को बालक के पास जहरीला सांप छोड़ने के लिए भेजा, पर सेवादारों को पता लग जाने पर सांप को मार दिया गया। तीसरी बार बच्चों को खिलाने वाले को लालच देकर, दहीं में जहर डालकर खिलाने के लिए भेजा, पर बालक ने दही को मुंह नहीं लगाया। ब्राह्मण को पेट में ऐसा दर्द उठा कि वह दर्द से मर ही गया। अकालपुरुष ने (गुरु) हरगोबिन्द जी की स्वयं रक्षा की व पृथी चंद का सारे शहर में बहुत अपमान हुवा। जब आपको (चेचक) निकली तब भी वाहिगुरु ने आपकी रक्षा की।

(गुरू हरगोबिन्द साहिब की बचपन में शाररीक व आध्यात्मिक शिक्षा, भाई गुरदास जी व बाबा बुड्ढा जी की निगरानी में हुई। बाबा बुड्ढा जी ने (गुरू) हरगोबिन्द को शस्त्र विद्या में भी निपुण कर दिया)।

जब गुरू अर्जुन साहिब बलिदान देने के लिए लाहौर जाने लगे तो उन्होंने भाई गुरदास व बाबा बुड्ढा जी आदि अनन्य सिखों को बुलाकर उस समय की राजनीतिक स्थिति पर विचार किया व आने वाले समय में हकूमत से सीधी टक्कर होने की सम्भावना से अवगत कराया। श्री हरिमंदर साहिब के अन्दर सारी संगत की उपस्थिति में गुरु-गद्दी की जिम्मेवारी गुरु हरिगोबिन्द साहिब को सौंप दी गई। उस समय इनकी आयु 11 वर्ष की थी।

गुरू अर्जुन साहिब के बलिदान ने सिख संगतों में जोश भर दिया। जवानों की रगों में लहू उछलने लगा। गुरू हरगोबिन्द साहिब

ने स्वयं दो तलवारें पहनीं एक मीरी की व दूसरी पीरी की। संगत के अन्दर वीर रस पैदा करने के लिए गुरू जी ने मसंदो को व सिख संगत के नाम हुकमनामे जारी किये कि वे अपने साथ भेंट में शस्त्र, घोड़े व अन्य सैनिक समान लेकर आया करें। सतिगुरू जी व सिख जंगलों में शिकार खेलने जाने लगे। सिखों को घुड़सवारी व शस्त्र-विद्या का प्रशिक्षण दिया जाने लगा। अनेकों मुसलमान भी हाकिमों के अत्याचारों से तंग आकर गुरू द्वारा गठित की जा रही सेना में भर्ती होने लगे।

गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने भी हरिमंदिर साहिब अमृतसर के सामने अकाल-तख्त की स्थापना की। इस तख्त के दर्शन करने से ही सिख के हृदय में राजसी ठाठ-बाट की भावना पैदा होती है। अकाल तख्त के पास कसरत होने लगी। मरासी योद्धाओं की वारें गाकर वीर रस का वातावरण पैदा करने लगे। सतिगुरू जी ने स्वयं संगतों के समूह को संबोधित करके वीर-रस से भरपूर व्याख्यान दिए।

लोगों में नई जागृति लाने के लिए गुरू जी ने दुआबे के गांवों में सिख धर्म का प्रचार किया। करतारपुर के समीप कई पठानों ने अपना जीवन गुरू जी को अर्पण किया। पंदेखान भी इन पठानों में से एक थ। गुरू जी फिर मालवे के इलाके में गए। गांव डरोली में भाई साधु आपका सिख बना। सन् 1616 ई. में आप कश्मीर गए। वहाँ कशमीरी गरीबी व भूख के कारण दुःखी थे। सतिगुरू जी ने भेंट स्वरूप आये दसंवध के धन को दुःखी लोगों पर व्यय किया। वहां कई मुसलमान भी सिख बने जिनमें भाई कटू जी का नाम प्रसिद्ध है। वापसी पर गुरू जी बारामूले के रास्ते गुजरात, ज़ोराबाद व हाफज़ाबाद होते हुए ननकाणा साहिब पहुंचे। फिर आप लाहौर आये। लाहौर में गिल्टी का बुखार जोरों पर था। गुरू हरिगोबिन्द जी ने पिता की तरह लाहौर में रहकर दुःखियों की सेवा की। सन् 1618 में गुरू जी वापिस अमृतसर आ गए।

जहाँगीर को सिखों की बढ़ती ताकत से अपनी बादशाही को खतरा महसूस होने लगा। आगरे से जहांगीर ने आदेश जारी किए कि गुरू हरिगोबिन्द साहिब को गिरफ्तार करके ग्वालियर के किले में बन्दी बनाया जाये। ऐसा ही किया गया। गुरू जी ने किले में पहुंचकर पहले

कैद हुए हिन्दू राजाओं की हिम्मत बांधी। सभी गुरू जी से प्रभावित होकर सिख बनने लगे। भिन्न-भिन्न स्थानों से जत्थे बनाकर सिख ग्वालियर पहुंचते लेकिन मुलाकात की आज्ञा नहीं थी। लोग किले की दीवारों को प्रणाम कर वापिस आ जाते। सतगुरू जी को कैद करने के विरुद्ध, सिखों व गुरू घर के प्रेमियों के अतिरिक्त कई नेक दिल मुसलमानों ने भी आवाजें उठाई। परिणाम स्वरूप गुरु जी को रिहा करने का आदेश देना पड़ा। गुरू जी ने अपने साथ 52 अन्य राजाओं को भी रिहा करवाया, जिससे आपका नाम, बंदी छोड़ दाता पड़ गया।

जहांगीर ने गुरू जी के साथ अच्छे सम्बन्ध कायम करने का यत्न किया। चन्दू ब्राह्मण जिसने गुरू अर्जुन देव जी को कष्ट देकर शहीद करवाया था, को सिख संगतों के हवाले कर दिया गया। चन्दू शाह को लाहौर के बाजारों में घुमाया गया। गुरदित्ते भड़भुंजे ने, जिसने चन्दू के आदेश पर गुरू अर्जुन देव जी पर गरम-गरम रेत डाली थी, गुस्से में आकर इस पापी को सिर पर कड़छा मार कर, खत्म कर दिया। सिखी प्रचार पुन: जोरों पर शुरू हो गया। लाहौर के काजी रुस्तम खां की लड़की बीबी कौलां ने गुरू जी की सिखी धारण कर ली। बीबी कौलां की याद में गुरु जी ने कौलसर सरोवर, बनवाया। अमृतसर में एक अन्य सरोवर बिबेकसर भी आप ही ने बनवाया था।

जहांगीर की मृत्यु के पश्चात शाहजहान तख्त पर बैठा। यह बहुत ही कट्टर व शरई बादशाह था। इसने आदेश दिया कि कोई भी मुसलमान अपना धर्म परिवर्तन नहीं कर सकता। लाहौर डब्बी बाजार में सिखों द्वारा बनाई गई बाउली (जलकुण्ड) को बंद करके वहां पर मस्जिद बना दी गई। सिखों में रोश की लहर दौड़ गई। कौम की तैयारी हो चुकी थी। गुरू हरगोबिन्द जी ने मुगल सेनाओं के साथ चार युद्ध लड़े और विजय प्राप्त की। युद्धों के उपरान्त आप फिर सिखी के प्रचार में व्यस्त हो गए।

आपके पांच सुपुत्र थे। 1. बाबा गुरदित्ता जी। 2. बाबा सूरज मल जी। 3 बाबा अणी राय जी। 4. बाबा अटल राय जी। 5. (गुरू) तेग बहादुर जी, तथा एक सुपुत्री बीबी वीरो जी।

गुरू हरगोबिन्द साहिब, 3 मार्च सन् 1644 को गुरपुरी सिधार गए व गुरगद्दी अपने पौत्र, बाबा गुरदित्ता जी के सुपुत्र श्री गुरू हरि राय साहिब जी को सौंप दी। ———

सच्चा पातशाह

सतगुरू सचा पातशाह पातशाहां पातशाह जुहारी

भाव-कि सच्चा गुरु ही सच्चा पातशाह है और वह पातशाहों का भी पातशाह होने के कारण पूज्य है।

जहांगीर बादशाह को सिख धर्म की कई बातें अच्छी नहीं लगती थीं। एक बात जो उसको बहुत चुभी, वह थी कि छटे गुरु, श्री गुरु हरगोबिन्द साहिब को, लोग सच्चा पातशाह क्यों कहते हैं ? उसने एक बार गुरु साहिब से पूछा भी था। गुरु जी ने कहा था कि समय आने पर इसका उत्तर तुम्हें स्वय मिल जाएगा। बादशाह उस समय तो चुप कर गया, पर यह बात उस अदर से चुभती रही कि मैं सारे हिन्दुस्तान का मालिक हूं मुझे तो लोग बादशाह कहें, पर यह एक फकीर की गद्दी पर बैठने वाला, अपने आपको सच्चा बादशाह कहलाए। इसका मतलब 'हम झूठे बादशाह हुए'।

एक बार आगरे के नजदीक जगल में बादशाह जहाँगीर व गुरु साहिब शिकार कर रहे थे। गर्मियों की दोपहर को आराम करने के लिए गुरु साहिब व जहांगीर अपने अलग-अलग खेमों में चले गए।

आगरे में, गुरु का सिदकवान सिख, घास बेचकर गुजारा किया करता था। उसने छटे गुरुजी के दर्शन पहले नहीं किये हुए थे। उसके अदर गुरु साहिब के दर्शनों की लालसा बहुत थी। जब उसने सुना कि साथ के जंगल में गुरू जी आये हुए हैं तो वह दर्शनों के लिए लालायित हो उठा।

उसने गुरु साहिब के घोड़े के लिए सुन्दर-सुन्दर घास इकट्ठा किया व भेंट लेकर, दर्शनों के लिए चल पड़ा।

तंबुओं के नजदीक जाकर उसने एक सिपाही से 'सच्चे पातशाह' का तंबू पूछा। सिपाही 'सच्चा पातशाह' शब्द सुनकर पहले तो हैरान हुआ पर फिर उसने जहांगीर वाले तंबू की ओर इशारा कर दिया।

सिख घास की गठरी सहित अन्दर जाना चाहता था, पर बाहर खड़ा पहरेदार सिपाही, गठरी बाहर रख कर अन्दर जाने के लिए जोर दे रहा था। सिख कहता कि यह घास ही तो मैंने भेंट करनी है। पर सिपाही मानता ही नहीं था। इन दोनों की बातचीत, अन्दर बैठा जहांगीर सुन रहा था। उसने सिपाही से कहा कि सिख

को उसी तरह अन्दर आने दिया जाये।

सिख ने अन्दर एक तरफ घास रखकर बादशाह के आगे प्रणाम किया व बड़े प्यार व श्रद्धा के साथ हाथ जोड़ कर विनती की :

'सच्चे पातशाह ! आपके दर्शनों को बहुत देर से लालसा थी। आपने बहुत मेहरबानी की है, जो दर्शन दिए। यदि अब आप कृपा करो तो जन्म-मरण के चक्कर में से निकाल दो।'

'सच्चा पातशाह' शब्द सुनकर जहाँगीर शीघ्र समझ गया कि वह सिख गुरू हरगोबिंद साहिब को मिलने आया है। इसने पहले कभी उनके दर्शन नहीं किए, इसीलिए गलती से मुझे ही गुरू समझ रहा है। पर सिख के प्यार व श्रद्धापूर्ण विनती का, बादशाह पर बहुत प्रभाव पड़ा। उसने कहा, "हे सिख ! मैं तेरे पर बहुत खुश हूं। मैं सारे हिन्दुस्तान का बादशाह, जहांगीर हूं। जो कुछ भी तुम मांगो, मैं देने के लिए तैयार हूं। यदि कहो तो कोई जागीर तुम्हारे नाम लिखवा दू, तुम अपना जीवन सुख से बिताओ। जन्म-मरण की बातें तो व्यर्थ हैं, इनको तुम छोड़ दो।"

सिख को अन्दर आते समय कुछ शक होने लगा था, पर जब उसने जहांगीर शब्द सुना तो झट से कह उठा :

"ओह ! मैं भूल गया, मैंने तो सच्चे पातशाह से मिलना था। सच्चा पातशाह जन्म-मरण के चक्कर मिटा सकता है। वही इस लोक व परलोक का असली मालिक है।"

सिख कहता गया—"बादशाह ! मैंने इस दुनियां के पदार्थों को क्या करना है। इनके साथ तो मन और भी भटकने लगता है। सच्चा सुख तो प्रभु के नाम में ही निहित है।" यह कहकर सिख ने बादशाह के आगे से एक टका भी उठा लिया जो उसने प्रणाम के समय भेंट किया था, व घास की गठरी उठाकर बाहर आ गया। बाहर सिपाही ने बहुत जोर देकर घास मांगी पर सिख ने एक न सुनी। वह सीधा सड़क पार सच्चे पातशाह के तम्बू की ओर चल पड़ा।

जहांगीर से रहा न गया। वह भी उसके पीछे चल पड़ा, यह देखने के लिए कि किस प्रकार सच्चा पातशाह कहलाने वाला गुरू, सिख को खुश करता है।

सिख ने गुरू साहिब के तम्बू के अन्दर जाकर एक तरफ घास

रखा व टका माथा टेक कर, हाथ जोड़कर, इस तरह विनती करने लगा :—

'सच्चे पातशाह ! मैं तो भूल गया था। आपने बहुत कृपा की, शीघ्र ही रास्ता दिखला दिया।

'यदि मैं जागीर के लालच में फंस जाता अथवा उसका डर मान जाता, तो आपके दर्शन किस तरह हो सकते थे व शांति किस प्रकार प्राप्त हो सकती थी ?' वह श्रद्धा व प्यार में कहता गया :—

'सच्चे पातशाह ! आपने कृपा की, दर्शन दिए हैं। अब कृपा करो जन्म-मरण का चक्कर भी खत्म कर दो—काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार से बचा लो "

अंतर्यामी सतगुरु, जानते थे कि यह घास बेचकर गुजारा करने वाला सिख लोगों की नजरो में चाहे गरीब है, पर ऊँची आत्मा का मालिक होने के कारण सच्चा अमीर है। गुरबाणी के अनुसार वह मनुष्य गरीब है जिसके अंदर प्रभु का नाम नहीं।

गुरू साहिब जानते थे कि यह गुरू का सिख गुरू के आदेश का पालन करने वाला है। गुरू की बतायी गयी मर्यादा में रहता है। ठगी, बेईमानी की कमाई नहीं करता बल्कि नेक कमाई के साथ सूखी रोटी खाना ठीक समझता है। हाथ काम की तरफ व दिल यार (प्रभु) की तरफ रखता हुआ सेवा, सब्र व शांति में रहता है, इसीलिए गुरू साहिब उस पर बहुत प्रसन्न हुए व कहा कि गुरू नानक पातशाह तेरी सभी कामनाएं पूरी करेंगे। जहाँगीर को वास्तविकता का पता चल गया कि ठीक ही गुरू हरगोबिंद साहिब सच्चे पातशाह हैं।

शिक्षा :—गुरू साहिब के आदेश में चलने वाले पर गुरू साहिब की कृपा होती है। आवश्यकता केवल यही है कि गुरू साहिब के आदेशों का पालन किया जाए। सिख गुरबाणी को पढ़कर निडर हो जाता है। वह किसी राजा से भी नहीं डरता न किसी लालच में फसता है। उसका सिर अपने गुरू के अतिरिक्त किसी अन्य के सम्मुख नहीं झुकता।

———

भाई तिलका जी

भाई तिलका गुरु हरगोबिंद साहिब जी के जमाने का सिख था। यह बहुत मीठा बोलने वाला व ज्ञानवान था। भाई तिलका, दृढ़ इरादे वाला व बलवान था। वह गढ़शकर, जिला होशियारपुर का रहने वाला था। आपने गुरू अर्जुन देव जी से चरण-पाहुल लेकर सिखी धारण की थी। गुरू हरगोबिंद जी ने भाई तिलका जी को होशियारपुर का प्रचारक नियुक्त किया। नगर के लोग भाई साहिब के जीवन से बहुत प्रभावित थे।

भाई साहिब के नजदीक ही एक वृद्ध योगी का डेरा था। भाई साहिब द्वारा बढ़ते गुरमत प्रचार के कारण योगी की मान्यता लोगों में घटती जा रही थी। योगी मन ही मन ईर्ष्या की आग में जलता रहता था। योगी भांति-भांति के पाखंड करके लोगों पर प्रभाव डालने की कोशिश करता, परन्तु सिख धर्म के सुन्दर सिद्धांतों के सामने उसका वश नहीं चल रहा था।

एक दिन योगी ने एक नया पाखंड रचा। उसने अपने शिष्यों की सहायता से यह खबर फैला दी कि रात में योगी को शिवजी के दर्शन हुए हैं व उन्होंने कहा है कि जो भी योगी के दर्शन करेगा, उसको एक वर्ष के लिए स्वर्ग प्राप्त होगा।

सारे इलाके में यह खबर फैल गयी। बेचारे भोले-भाले व अज्ञानी लोग, योगी की चाल में फंस गए। भारी संख्या में लोग योगी के दर्शन करने लगे, पर गुरबाणी समझने वालों पर इस पाखण्ड का कोई असर नहीं हुआ।

योगी ने अपने एजेंटों की सहायता से भाई तिलका जी को संदेश भेजा कि आकर योगी के दर्शन करें व एक-एक साल के लिए स्वर्ग प्राप्त कर लें। भाई साहब तो पक्के गुर सिख थे। उन्होंने योगी की एक न सुनी। योगी ने बहुत जोर लगाया कि भाई तिलका जी आएं, पर भाई साहिब उस पाखंडी के दर्शन करने गए ही नहीं।

आखिर हारकर, योगी अपने शिष्यों व अन्य लोगों के साथ भाई तिलका जी को स्वयं दर्शन देने आया। जब भाई साहिब को पता लगा कि योगी उनकी ओर आ रहा है तो भाई जी ने अपना दरवाजा

बंद कर लिया। योगी ने आकर दरवाजा खटखटाया व ऊंची आवाज में कहने लगा, "मैं आपके लिए स्वयं चल कर आया हूं, आप मेरे दर्शन करो व स्वर्ग प्राप्त करो।"

भाई साहब ने अंदर से जवाब दिया, 'मैं दरवाजा नहीं खोलूंगा। मैं तेरे जैसे पाखंडी की सूरत देखने के लिए भी तैयार नहीं। तुम लोगों को लूट रहे हो। मैं गुरू का सिख हूं। मुझे स्वर्ग की जरूरत नहीं। हम गुरू के चरणों पर ऐसे कई स्वर्ग न्योछावर कर सकते हैं।"

यह उत्तर सुनकर योगी के मन को भारी आघात हुआ। योगी का अन्तंमन कांप उठा। वह सोचने लगा कि कैसा सिख है जो गुरू की शिक्षा को स्वर्ग से भी उत्तम मानता है। यदि सिख इतना महान है, तो इसका गुरू कितना महान होगा। वह सोच रहा था कि उस गुरू का उपदेश व बाणी कितनी सच्ची होगी, जिसको पढ़कर मेरे जैसे पाखंडियों का भंडा-फोड़ हो जाता है, और सिख धोखा नहीं खा सकता। योगी ने गुरू की दुहाई देकर दरवाजा खोलने की विनती की। उसने कहा कि मैंने भी उस गुरू के चरण पकड़ने हैं जिसके तुम सिख हो। योगी की यह बात सुनकर भाई तिलका ने दरवाजा खोला। भाई तिलका जी इलाके की संगत के साथ योगी व उसके शिष्यों को लेकर गुरू जी के दरबार पहुंचे। सतिगुरू जी ने सबको गुरमत का ज्ञान दिया। सिखी का उपदेश प्राप्त करके योगी वापिस गढ़शंकर चला आया व सिखी का प्रचार करने लगा।

शिक्षा:—गुरू का सिख स्वर्ग नर्क को इच्छा नहीं करता। गुरू की शिक्षा पर चलना ही वह अपने जीवन का ध्येय समझता है। गुरबाणी पढ़कर हमें पता लग जाता है कि स्वर्ग-नर्क का नारा, लोगों से दान-पुण्य लेने लिए एक धोखा ही है। न कोई ऐसा स्वर्ग है और न ही कोई नर्क।

भाई भैरों जी

भाई भैरों, गुरू हरगोबिन्द जी के समय का एक सिख था। गुरू जी कोरतपुर साहिब रहते थे। कीरतपुर का राजा तारा चन्द था।

यहां के लोग नैना देवी की पूजा करते थे। वे देवी से वर मांगते हुए कहते थे, " माता हमें धन दे, माता हमें पुत्र दे, माता हमारी रक्षा कर"। भाई भैरों को उन लोगों की यह बात अच्छी नहीं लगती थी। वह जानता था कि देवी-देवता कोई चीज़ नहीं हैं। कर्त्ता केवल वाहिगुरु है। लोग भटके हुए हैं। मूर्ति बेजान पत्थर की है। वह चाहता था कि लोग रोटी देने वाले, पैदा करने वाले, पालन करने वाले, परमात्मा की पूजा करें। लोगों का गलत विश्वास खत्म करने के लिए एक दिन भाई भैरों ने नैना देवी की मूर्ति का नाक तोड़ दिया। भाई भैरों बहुत बहादुर था। हिन्दुओं की हिम्मत न हुई कि उससे टक्कर लें। लोगों ने राजा को शिकायत की। सिख शारीरिक तौर से भी बलवान होते थे। गुरू साहिब ने हकूमत के साथ चार लड़ाइयां लड़ीं व जीती थी। सिखों का काफी दबदबा था। राजा ने गुरू जी को शिकायत की कि आपके सिख, भाई भैरों ने देवी का नाक तोड़ दिया है। उसने हमारे धर्म पर आक्रमण किया है। उसको सजा मिलनी चाहिए। गुरू जी ने भाई भैरों को बुलाया व पूछताछ की। भाई भैरों ने उत्तर दिया कि देवी से पूछना चाहिए कि उसका नाक किसने तोड़ा है? राजा, भाई भैरों की यह-बात सुनकर हंस पड़ा व कहने लगा कि देवी तो बोल नहीं सकती। वह पत्थर की है। वह तो अपनी रक्षा भी नहीं कर सकती।

अब भाई भैरों जी की बारी थी। उन्होने कहा कि मैं यही तो बताना चाहता था, जो आपने कहा है। आपने स्वयं ही पत्थर की मूर्ति बनाई,फिर आप ही उससे वर मांगने लगे। जो देवी अपनी रक्षा स्वयं नहीं कर सकी, वह आपकी रक्षा क्या करेगी। भाई भैरो जी ने कहा, 'क्यों न हम एक परमात्मा की पूजा करें जो सब को पैदा करता है व सबकी रक्षा करता है'। भाई साहिब का यह उत्तर सुन कर सभी चुप हो गए।

शिक्षा :—इस कथा से हमें यह शिक्षा मिलती है कि हमें वैष्णव देवी, नैना देवी या अन्य हिन्दू देवी देवताओं को नहीं मानना चाहिए। सिखों का देवी-देवताओं के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। हमें केवल एक अकालपुरख को ही याद करना चाहिए। वैसे भी देवी देवता मन की कल्पना मात्र हैं। प्रभु की अलग-अलग शक्तियों को अलग-अलग नाम

दिये गए हैं । इनका अपना कोई अस्तित्व नहीं है। पत्थर आदि की मूर्तियों की पूजा करनी, व वर मांगने अपने आपको धोखा देना है। इससे कुछ नहीं मिलता।

— —

श्री गुरू हरि राय जी

(सातवीं पातशाही)

श्री गुरू हरि रॉय जी का जन्म कीरतपुर में, 16 जनवरी सन् 1630 को, बाबा गुरदित्ता जी के घर में हुआ। बाबा गुरदित्ता जी गुरू हरिगोबिन्द साहिब के सब से बड़े सुपुत्र थे। कीरतपुर नगर, गुरू हरिगोबिन्द साहिब के आदेश से सन् 1627 में बाबा गुरदित्ता जी ने बसाया था। इस स्थान पर गुरू नानक देव जी, सांई बुढण शाह को मिले थे। गुरू हरिराय जी की माता का नाम, माता निहाल कौर जो था। गुरू हरिराय जी की शादी अनूप शहर, जिला बुलन्द शहर, उत्तर प्रदेश के निवासी, श्री दयाराम जी की सुपुत्री कृष्ण कौर जी (सुलक्षणी) के साथ सन् 1640 में हुई। इनके उदर से दो पुत्र—श्री रामराय व श्री हरि कृष्न साहिब ने जन्म लिया।

गुरू हरगोबिन्द साहिब 3 मार्च, 1644 को गुरपुरी सिधार गये थे व गुरगद्दी की जिम्मेदारी गुरू हरिराय साहिब को सौंप दी थी। उस समय आपकी आयु लगभग 14 वर्ष थी।

सन् 16 6 में पजाब में अकाल पड़ गया। तीन वर्ष तक भुखमरी फैली रही। लोग रोटी के एक-एक टुकड़े के लिए तरसने लगे। आदमी, आदमी को खाने को दौड़ने लगा। गुरू हरिराय साहिब के सम्मुख अपने दादा—पड़दादा जी के उदाहरण मौजूद थे। जिस दसवंध ने गुरू अर्जुन साहिब के समय गरीबों को अमूल्य सहारा दिया था, वही दसवंध अब भी अकाल-पीड़ित लोगों के लिए प्रयोग में लाया गया। सिखों की संख्या बढ़ चुकी थी। दूसरे प्रांतों में सुखी बसते हुए सिखों ने अकाल-पीड़ितों के लिए दिल खोलकर दान दिया।

जब शाहजहां ने आदेश दिया कि सभी नए मन्दिरों को गिरा दिया जाए व पुराने मन्दिरों की मुरम्मत भी न होने दी जाय, तो

हिन्दू जनता भय से सहम गई। चाहे यह आदेश सिखों के धर्म-स्थानों पर लागू नहीं होता था, क्योंकि सिख मूर्ति के पुजारी नहीं थे। पर गुरु हरिराय साहिब के सामने तो सिखी का यह सिद्धांत था कि 'न किसी से डरो, न किसी को डराओ'। इसलिए आपने सहमे हुए हिन्दुओं को सहारा देने के लिए कीरतपुर के आस-पास के इलाके में प्रचार किया। फिर गुरु जी कीरतपुर से करतारपुर चले गये व करतारपुर से नूर महल, डरोली, भाई रूपा आदि नगरों से होते हुए गांव मराझ पहुंचे। यहां के चौधरी, भाई काले ने आपकी बड़ी सेवा की। गुरु जी यहां कई दिन ठहरे रहे। एक दिन चौधरी काला, अपने दो भतीजों जिनके नाम फूल व सुन्दरी थे, को साथ लेकर गुरु जी के दरबार में, आया। इन लड़कों के मां-बाप मर चुके थे। चौधरी काला ही इनका पालन-पोषण करता था। लड़कों ने गुरु जी के आगे प्रणाम कर, अपने पेट पर हाथ मारना शुरू कर दिया। गुरु जी देख कर हँस पड़े। काले से कारण पूछा। उसने उत्तर दिया कि ये यतीम हैं, कुछ खाने के लिए मांगते हैं। गुरुजी ने वचन किया कि इनकी सन्तान तो सतलुज व यमुना के बीच तक राज्य करेगी। अगले दिन चौधरी काला अपनी पत्नी के कहने पर अपने पुत्रों को भी ले आया। उन्होंने भी अपने पेट पर हाथ मारे, पर चौधरी ने गुरुजी को सारी बात बता दी कि बच्चों को सिखा कर लाया गया है। गुरु हरिराय साहिब ने वचन किया कि इनकी सन्तान को भी कोई कमी न रहेगी। गुरुजी के इस आशीर्वाद से ही कुछ रियासतें—पटियाला, नाभा, जींद आदि बनीं, जिनको फुलकीयां रियासतें भी कहते हैं।

जहां आप दुःखी दिलों को नाम-दान देकर निरोग्य व सुखी करते, वहां मनुष्यों के रोगी शरीरों के रोग मिटाने के लिए बहुत बड़ा दवाखाना खोला, जिसमें काफी कीमती व दुर्लभ दवायें मंगा कर रखीं। हर रोगी को मुफ्त दवा व खुराक मिलती थी। एक बार शाहजहां का बेटा दारा शिकोह, बीमार हो गया। हकीमों ने खास किस्म के वजन के लौंग, हरड़ व राजमोती दवाई के लिए बताये। ये वस्तुएँ आपके दवाखाने के सिवाय अन्य कहीं से भी प्राप्त न हुईं। दारा शिकोह स्वस्थ हो गया। उसने कीरतपुर पहुंच कर गुरुजी का धन्यवाद किया। श्री गुरु हरगोबिन्द साहिब की आज्ञा से आपने 2200 घुड़सवार

रखे हुए थे, ताकि जरूरत पड़ने पर प्रयोग में लाये जा सकें। जब शाहजहां के बेटों की दिल्ली के तख्त के लिए आपस में लड़ाई हुई तो एक बार गुरू जी को अपनी सेना को मैदान में लाना पड़ा। दारा शिकोह, औरंगजेब से हार कर लाहौर की तरफ भाग गया। उसको पकड़ने के लिए औरंगजेब ने फौज भेजी। दारा शिकोह, गुरू हरिराय जी को गोइंदवाल साहिब में मिला। व सहायता के लिए विनती की। शरण आए दुःखी जरूरतमंद की सहायता करनी गुरू नानक के घर का प्रथम नियम रहा है। गुरू जी ने उसको सांत्वना दी। खाना खिला कर विदा किया। फिर आप 2200 शूरवीर सवार लेकर ब्यास के किनारे पर जा खड़े हुए व नावों को काबू में कर लिया। इस तरह उन्होंने सेना को एक दिन तक, नदी पार करने से रोक लिया। इतने में दारा शिकोह सुरक्षित स्थान पर पहुंच गया।

इस बात का पता औरंगजेब को भी लग गया। जब वह भाइयों को कत्ल व बाप को कैद करके बादशाह बना, तो उसने तख्त पर बैठने के पश्चात, शीघ्र ही गुरू जी को बुला भेजा। गुरू जी स्वयं तो नहीं गए, पर अपनी जगह उन्होंने अपने बड़े पुत्र बाबा राम राय जी को भेज दिया। उन्होंने राम राय जी को जाने से पहले शिक्षा दी कि हरेक कार्य में गुरू पर भरोसा रखना है। गुरू को सदा अंग-संग समझना। बाबा राम राय जी बड़े प्रवीण व हाजिर जवाब थे। उनकी विद्वता का औरंगज़ेब पर बड़ा प्रभाव पड़ा। औरंगज़ेब ने पूछा कि गुरू हरि राय जी ने दारा शिकोह की सहायता क्यों की? तो राम राय जी ने उत्तर दिया कि गुरू जी ने उसको जरूरतमन्द दुखिया जानकर, मदद की। फिर सिख धर्म के बारे में औरंगज़ेब ने कई प्रश्न पूछे, जिनका उत्तर राम राय जी ने गुरू नानक देव जी के आशय के मुताबिक दिया। हरेक आजमाइश में राम राय जी सफल हुए। औरंगजेब पक्का मुसलमान था। वह चाहता था कि प्यार व सम्मान के साथ राम राय जी का दिल जीत कर उन्हें अपने धर्म में शामिल किया जाय। उसने काजियों की प्रेरणा पर राम राय जी से पूछा, "आपके ग्रन्थ में लिखा है :—

"मिट्टी मुसलमान की पेड़े पई कुमिआर।
घड़ि भांडे इटां कीआं जलदी करे पुकार॥"

"इसके अर्थ क्या हैं ? क्या यह प्रगट रूप से हमारे धर्म की निन्दा नहीं ?" बादशाह के साथ बना असर रसूख कायम रखने के लिए, राम राय जी निशाने से चूक गये व कह दिया कि मिट्टी 'मुसलमान' की नहीं, मिट्टी 'बेईमान' की लिखा है। यह सुनकर बादशाह खुश हो गया। उसने राम राय को उनका इलाका, जागीर के रूप में दे दिया'।

जब गुरू हरि राय जी को राम राय की इस कमजोरी व झूठ का पता लगा, तो आपने फैसला भेजा कि राम राय अपनी सूरत न दिखाए। गुरू जी ने उसको त्याग दिया व गुर-गद्दी अपने छोटे सुपुत्र श्री (गुरू) हरि कृष्न साहिब को दे दी। आप 6 अक्तूबर सन् 1661 को कीरतपुर में गुरपुरी सिधार गये।

आपने सिखी के प्रचार के लिए ...। केन्द्र 1. सुथरे शाही 2. भगत भगवान व 3. भाई फेरू जी कायम किये। प्रत्येक केन्द्र एक उदासी सिख के सपुर्द था। आपके पिता, बाबा गुरदिता जी ने पहले से ही सिखी प्रचार के लिए धुएँ अथवा धूहणियां कायम की थीं।

— — —

श्री गुरु हरिकृष्न साहिब जी

(आठवीं पातशाही)

श्री गुरू हरि कृष्न साहिब का जन्म 7 जुलाई सन् 1656 को कीरतपुर में, पिता गुरू हरि राय जी के घर, माता कृष्ण कौर जी के उदर से हुआ। गुरू हरि राय जी के बड़े सुपुत्र बाबा राम राय जी ने औरंगजेब के चुंगल में आकर, उसको खुश करने के लिए गुरू नानक देव जी की बाणी बदल दी थी। अत: गुरू हरि राय जी ने गुरू-गद्दी की जिम्मेवारी आपको सौंप दी। इस समय आपकी आयु करीब 5 साल 3 महीने की थी।

जब इस बात का पता राम राय को लगा तो उसे बहुत बुरा लगा। उसने अपने ताऊ जी, धीरमल के साथ सलाह करके कुछ मसंदों को अपने साथ मिला लिया व उन्हीं मे स्वयं गुरु कहलवाने का यत्न किया। पर सिखों को गुरू हरि राय साहिब जी के निर्णय का पता था। इसलिए राम राय को किसी ने भी गुरू नहीं माना।

इधर मुंह की खाकर वह सीधा औरंगज़ेब के पास पहुंचा। उसने शिकायत की कि बड़ा पुत्र मैं हूं। गुरू बनने का हक मेरा है। मुझे, मेरा हक दिलाया जाय। औरंगज़ेब ने राजा जयसिंह को कहा कि आप गुरू साहिब को घर में बुलाओ। राजा जयसिंह ने अपने दीवान, परस राम को पचास सवार देकर हिदायत दी कि कीरतपुर जाकर, मेरी तरफ से गुरू जी को दिल्ली आने की विनती करें, व बड़े आदर-सम्मान से एक पालकी में सवार करके ले आएं। कीरतपुर के आस-पास के जिन लोगों ने सुना कि गुरू जी औरंगजेब के बुलावे पर दिल्ली जा रहे हैं, तो सभी बौखला उठे। गुरू जी के चलने के समय तक सिख संगतों की भारी भीड़ बन गई। गुरू साहिब ने सबको धैर्य बंधवाया। फिर भी सैंकड़ों सिख साथ चल पड़े। जिला अम्बाला के इलाके, पंजखौरे में पहुंच कर गुरू जी ने कुछ मुखी सिखों के अलावा, बाकी सबको वापिस भेज दिया। पंजखौरे में एक पंडित कृष्ण लाल था। वह गुरू जी की महिमा सुनकर बौखला उठा। सिखों को सुना-सुना कर कहने लगा, यदि गुरू जी में सचमुच कोई आत्मिक शक्ति है, तो श्री कृष्ण जी की गीता में से किसी श्लोक के अर्थ कर के दिखायें। गुरू हरि कृष्ण जी ने पंडित जी को कहा, 'यदि आपको गुरू नानक साहिब की कृपा दृष्टि का कमाल जरूर ही देखना है तो अपने नगर में से किसी को ले आयें, गुरू की कृपा से, आपकी तसल्ली मैं करवा दूंगा। पंडित, छज्जू नामक एक महामूर्ख को ले आया। गुरू जी ने कृपा की नज़र डाली, तो वह मूर्ख एक बड़े विद्वान की तरह गीता के श्लोकों का पाठ व अर्थ सुनाने लगा। कुरूक्षेत्र के पंडितों को यह चाल भी महंगी पड़ी व गुरू जी की महिमा चारों ओर पहले से और अधिक फैल गई।

जब संगत के साथ आप दिल्ली पहुंचे तो राजा जयसिंह ने अपने बंगले में आपको ठहराया। आज-कल यहां बंगला साहिब गुरद्वारा है। राजा जयसिंह की रानी के दिल में गुरू जी की बाल अवस्था के बारे में कुछ ब्राह्मणों ने भ्रम डाल दिया था। रानी ने गुरू जी की परीक्षा लेनी चाही। उसने अन्य कई अमीर घरानों की स्त्रियों को अपने महल में बुलवा लिया व मन में यह धारण किया कि यदि गुरू जी सच्चे हैं, तो इन सबको छोड़ कर मेरी ही गोद में आकर बैठेंगे। बालगुरू

हरि कृष्न साहिब जी सबके सामने से निकलते हुए राजा जयसिंह की रानी की गोद में जा बैठे। रानी प्रसन्न हो उठी।

दिल्ली पहुंच कर गुरू जी ने औरंगज़ेब को मिलने से इनकार कर दिया। दिल्ली की संगत रोज़ाना राजा जयसिंह के बंगले पर पहुंचती। सतसंग होता व संगत दर्शन करती। औरंगजेब ने अपने शहज़ादे मुअज्म को भेजा। उसको गुरू जी ने आत्मिक उपदेश देकर प्रसन्न किया। राम राय के दावे के बारे में गुरू जी ने बादशाह को कहलवा भेजा कि गुरगद्दी विरासत या मलकियत नहीं है। राम राय जी ने गुरबाणी को बदला, तो पिता गुरू जी ने उनको त्याग दिया। इसमें कोई ज्यादती नहीं, न ही किसी के साथ अन्याय है। गुरगद्दी तो कृपा के पात्र को मिलती है। इस पर दुनियावी नियम लागू नहीं होते।

गुरू जी के यह वचन सुनकर बादशाह को यकीन हो गया कि राम राय जी के साथ कोई ज्यादती नहीं हुई है। बादशाह गुरू हरि-कृष्न जी के व्यक्तित्व को अच्छी तरह देख चुका था।

गुरू जी अभी दिल्ली में ही थे कि सन् 1664 में चेचक की बीमारी फैल गई। गुरू जी ने दुःखी गरीबों की सहायता करनी शुरू कर दी। दसवंध (कमाई का दसवां हिस्सा) की भेंट को इसी सेवा के लिए इस्तेमाल किया गया। जहां भी चेचक का जोर था, गुरू जी उस इलाके में गये। इसका यह नतीजा निकला कि एक दिन गुरू हरिकृष्न साहिब को भी बड़े जोर से बुखार हो गया। गुरू जी के शरीर पर चेचक के लक्षण दिखाई देने लगे। गुरू जी ने अपना संसार छोड़ने का समय नजदीक जान कर, संगत को आदेश दिया कि "बाबा बकाले!" जिसका भाव यह था कि हमारे बाद गुरू गद्दी की जिम्मेदारी संभालने वाला महापुरूष गांव बकाले (अमृतसर) में है। यह कह कर आप 30 मार्च सन् 1664 को गुरपुरी सिधार गए। यमुना के किनारे जिस स्थान पर आपका अंतिम संस्कार किया गया, वहां अब गुरद्वारा 'बाला साहिब' है।

श्री गुरु तेग बहादुर जी

(नौवीं पातशाही)

श्री गुरू तेग बहादुर साहिब का जन्म पहली अप्रैल सन् 1621 को, गुरू के महल, अमृतसर में हुआ। आप गुरू हरगोबिन्द साहिब के सब से छोटे सुपुत्र थे। आपकी माता का नाम माता जानकी जी था। आप नौ वर्ष की आयु तक अपने पिता जी के साथ अमृतसर में रहे। शुरू से ही आप सन्त स्वरूप, गहरे विचारवान, बलवान, निर्भय व त्यागी स्वभाव के मालिक थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा मीरी-पीरी के मालिक, गुरू हरगोबिन्द साहिब की निगरानी में हुई। आपको गुरमत विद्या के साथ शस्त्र विद्या भी दी गई। आप 'तेग' के ऐसे धनी बने कि गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने नाम ही तेग बहादुर रख दिया।

जब गुरू हरगोबिन्द साहिब अमृतसर से करतार पुर आए तो आप पिता (गुरू जी) के साथ ही थे। सन् 1634 में आपकी शादी करतारपुर (जालंधर) निवासी, श्री लाल चन्द की सुपुत्री गुजरी के साथ हुई। इसी वर्ष जब करतारपुर साहिब में युद्ध हुआ तो आपने अपनी तेग के जौहर दिखाये। इस लड़ाई के बाद गुरू हरगोबिन्द साहिब कीरतपुर चले गए व आप पिता (गुरू) की आज्ञा अनुसार अपनी माता व पत्नी सहित अपने नाना के गांव, बकाले आ गये।

बकाले आकर (गुरू) तेग बहादुर जी शान्त चित्त रह कर परमात्मा का स्मरण करने लगे। आपका घरेलू जीवन बड़ा सादा व सुखदायी था। बकाले में गृहस्थी जीवन के सारे फर्ज पूरे करते हुए, आप आने वाले समय की तैयारी कर रहे थे।

गुरूगद्दी की जिम्मेदारी से पहले आपने अमृतसर में सिख धर्म का बहुत प्रचार किया। सन् 1656 में आपने मालवा, यू. पी. और बिहार तक का एक बहुत बड़ा प्रचारक दौरा किया। इस प्रचारक दौरे को पूर्ण कर आप 1662 में वापिस अमृतसर बकाले पहुंचे।

30 मार्च सन् 1664 को गुरू हरि कृष्ण साहिब जब दिल्ली में गुरू-पुरी सिधारे तो उन्होंने हिदायत दी थी कि 'बाबा बसे ग्राम बकाले।" भाव गुरू गद्दी का मालिक बकाले में है।

इस बात का नाजायज फायदा उठा कर बाईस पाखंडी गुरू

गद्दी के दावे-दार, बकाले आ इकट्ठे हुए। धीरमल सब से आगे था। इन पाखंडी गुरुओं ने अपनी दुकानें चमकानी आरम्भ कर दीं। भोले-भाले लोग धोखा भी खाने लगे। आखिर गुरु साहिब का श्रद्धालु सिख मक्खन शाह लुबाणा, टांडा जिला जेलहम का निवासी, बकाले आया। वह अपने साथ दसवंध की रकम पांच सो मोहरें लेकर आया। आगे बाईस पाखंडी गुरु बने देखे। उसने प्रत्येक के आगे दो-दो मोहरें रखीं व परख लिया कि सब पाखंडी हैं। फिर वह गुरु तेग बहादुर साहिब के निवास स्थान में गया। वहां भी दो मोहरें रखीं, पर अंतर्यामी सच्चे गुरु ने पूरा दसवंध, पाँच सौ मोहरें देने की याद दिलाई। मक्खन शाह ने सच्चे गुरु को ढूंढ ही लिया था। वह छत पर चढ़ कर ढिंढोरा देने लगा, "गुरु लाधो रे! गुरु लाधो रे!" (गुरु ढूंढ लिया, गुरु ढूंढ लिया)।

जब संगतों को सच्चाई का पता लगा तो पाखंडियों को छोड़ सच्चे गुरु की शरण ली। बाबा धीरमल यह बात सहन न कर सका। उसने शीहें मसंद को लालच देकर गुरु तेग बहादुर साहिब पर गोली चलवाई, पर गुरु जी बाल-बाल बच गये। शीहें ने साथियों की सहायता से गुरु घर में से जो सामान मिला, लूट लिया व बाबा धीर मल सहित करतार पुर को चला गया

जब मक्खन शाह लुबाणे को पता चला, तो उसने सिखों को साथ लेकर धीर मल का पीछा किया। लूटा हुआ माल वापस ले लिया। आदिग्रंथ को बीड़ भी ले आए। परन्तु गुरु जी नम्रता के धनी थे। उन्होंने धीर मल व उनके साथियों को ज्यादती को नजरअन्दाज करके सारा सामान व ग्रंथ भी वापिस भेज दिया।

सन् 1665 में भाई मक्खन शाह को साथ लेकर, आप श्री हरिमन्दिर साहिब, अमृतसर दर्शनों के लिए गए। पुजारियों ने समझा यदि गुरु जी यहां ठहर गए तो हमारी रोजी-रोटी बन्द हो जाएगी। उन्होंने दरवाजे बन्द कर दिए व चले गये। गुरु जी बाहर बरामदे में बैठे इन्तजार करते रहे। यहाँ आज गुरुद्वारा "थड़ा साहिब" है। काफी समय इन्तजार करने पर भी जब पुजारी नहीं आये तो आप बाहर से ही नमस्कार कर के गांव 'वल्ले' की तरफ चल पड़े। गांव वल्ले की सँगत

ने आपकी सेवा की। बाद में जब पुजारी आए तो भाई मक्खन शाह ने उन्हें धमकाया। पुजारियों को साथ लेकर गाँव वल्ले पहुंचे। गुरू जी ने पुजारियां को कहा कि आप गुरूद्वारों के सेवादार (मसंद) नहीं रहे। 34 साल हो गये हैं आपको पूजा का बंगार खाते हुए, इसलिए आप तृष्णा की आग में जल रहे हो।

गांव वल्ले से आप बकाले गऐ व फिर करतार पुर के रास्ते से कीरतपुर पहुंचे। कहलूर के राजा दीप चन्द से माखोवाल की जमीन खरीद कर, अक्तूबर सन् 1665 में आपने आनन्द पुर साहिब नगर बसाया।

औरंगजेब ने हिन्दुओं के प्रति सख्त रवैया अपना लिया। आप पूर्वी देश की तरफ हिन्दू जनता को ढाढस देने के लिए व सिखी प्रचार के लिए, परिवार सहित चल पड़े।

आनन्दपुर से घनौली, रोपड़, मूलोवान आदि होते हुए आप साबोकी तलवंडी पहुंचे। रास्ते में दसवंध की रकम कुएं व जलकुण्ड आदि बनाने पर खर्च करते गए। कई गांवों से होते हुए धमधाण पहुंचे। यहां भाई रामदेव को, जो संगतों को जल पिलाकर सेवा करते थे, "भाई मीहां" का नाम दिया।

आप कुरुक्षेत्र, मथुरा, आगरा, कानपुर, इलाहाबाद, प्रयाग, काशी आदि हिन्दू तीर्थों पर गए। वहां इकट्ठे हुए लोगों को गुरूमत दृढ़ करवाई व सच्चा तीर्थ सतिसंगत को ही बताया।

फिर आप गया से पटना गए। यहां भाई जैता हलवाई के घर माता गूजरी को ठहराया, जिनके उदर से 26 दिसम्बर सन् 1666 को (गुरू) गोबिन्द सिंघ जी का जन्म हुआ।

पटना से राजमहल, मालदा, मुर्शिदाबाद होते हुए आप ढाका पहुंचे। ढाका से आसाम पहुंचे। आसाम में सन् 1670 में आपने राजा रामसिंह व अहोमा कबीले के सरदार राजा चक्रध्वज में समझौता करवाया और दोनों तरफ से खून की नदियां बहने से रुक गईं। आसाम से आप सीधे पंजाब आये क्योंकि पीछे औरंगजेब ने हिन्दुओं पर कड़ी नजर रखनी शुरू कर दी थी और पाठशालाएं तथा मन्दिर गिरा देने का ऐलान कर दिया था।

गुरू जी पटना आये। थोड़ा समय ठहर कर साहिबजादे को मिल कर, बक्सर, बनारस, अयोध्या आदि से होते हुए ढाई-तीन महीने में आनंन्दपुर पहुंच गए। थोड़े समय पश्चात् परिवार को भी पटना से आनन्दपुर साहिब बुलवा लिया।

जब कश्मीर में, शेर अफगान खां ने तलवार के बल पर कशमीरी पंडितों को मुसलमान बनाना शुरू किया, तो कशमीरी पंडित आनन्दपुर साहिब, गुरू जी के पास फरियाद लेकर आए। गुरू जी ने शरण आए की बांह पकडी अर्थात उनकी सहायता के लिए तैयार हो गए, और दिल्ली जाकर शहीद होने का फैसला कर लिया।

आनन्दपुर से चल कर आप कीरतपुर, फैजाबाद, समाणा, कैथल, लाखन माजरा, रोहतक आदि स्थानों पर सहमी हुई हिन्दू जनता में "न किसी से डरो न किसी को डराओ" का प्रचार करते हुए आगरे पहुंचे। आपने 5 खास सेवकों को अपने पास रखा—भाई मतीदास जी, भाई दयाला जी, भाई गुरदित्ता जी, भाई ऊदा जी और भाई जैता जी। आपके प्रचार ने, लोगों में जागृति पैदा कर दी। लोगों में क़ुर्बानी तथा अत्याचार के विरुद्ध डट जाने का बल व उत्साह पैदा हुआ। इस बात की रिपोर्ट औरंगजेब के पास हसन अबदाल में पहुंची। उसने गुरू जी को गिरफ्तार करने के आदेश जारी किए। आगरे से गुरू जी गिरफ्तार करके दिल्ली लाये गए। उपरोक्त पाँच सिख भी उनके साथ थे।

गुरू जी तीन सिक्खों, भाई मती दास, भाई सती दास तथा भाई दयाला जी के साथ ग्रिफतार करके दिल्ली लाए गए। गुरु जी ने भाई जैता जी तथा भाई गुरदित्ता जी की डिउटी लगाई कि वे शहर में रहें तथा जो गुरु जी के साथ बीते, उस अनुसार कारवाई करके, उसकी पूरी जानकारी गुरू गोबिन्द सिंघ जी तक पहुंचाए।

गुरू तेग बहादुर साहिब को कहा गया कि वे इस्लाम कबूल करें या करामति दिखाएं, नहीं तो सीस देने के लिए तैयार हो जायें।

गुरूजी ने कहा, "धर्म छोड़ने का तो प्रश्न ही नहीं उठता और करामात दिखाना प्रभु के सेवकों को अच्छा नहीं लगता। सीस देने के लिये हम तैयार हैं, बाकी सीस देने के लिए ही तो हम आये हैं।"

गुरू तेग बहादुर साहिब को भयभीत करने के लिए, भाई मतीदास जी को उनके सामने ही आरे के साथ चीर कर दो फाड़ कर दिया गया। फिर भाई दयाला जी को देग में उबालकर शहीद कर दिया। उसके बाद गुरू तेग बहादुर साहिब को 11 नवम्बर सन् 1675 को चांदनी चौक में शहीद कर दिया गया। जलालुद्दीन जल्लाद ने, तलवार से गुरूजी का शीश धड़ से अलग कर दिया।

भाई जैता जी और भाई ऊधा जी ने भाई लखीशाह बनजारे से सलाह करके, गुरूजी का धड़ और शीश सम्भालने का प्रबन्ध किया। भाई लखीशाह बैलगाड़ी से चूना व कली, लाल किले में फेंकते हुए चांदनी चौंक पहुंचे। वहां योजनानुसार भाई ऊधाजी, जो कि मुस्लिम वेश में खड़े थे, से मिलकर सतगुरुजी का धड़ बैलगाड़ी में रखा गया। 3 मील, दूर गांव रकाबगज मे भाई लखीशाह ने अपने घर को आग लगाकर, धड़ का संस्कार किया। यहां आजकल गुरुद्वारा रकाबगंज है। दूसरी तरफ भाई जैता जी, सीस को ढूंढने की कोशिश में थे। इसी बीच शोरगुल में उन्होने गुरू जी का सिर उठाया और जल्दी-जल्दी रास्ता तय करते हुए सीधे आनन्दपुर साहिब पहुंचे। भाई ऊधा जी भी रास्ते में मिल गये। दोनों सीस लेकर गुरू गोबिन्द सिंघ जी के पास पहुंचे। गुरू जी ने उन्हें गले से लगाया। "रंघरेटे गुरू के बेटे" कहकर सम्मानित किया। जहां गुरू तेग बहादुर साहिब जी के सीस का संस्कार किया गया, वहाँ आज गुरूद्वारा सीसगंज साहिब विद्यमान है।

श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी

(दसवीं पातशाही)

श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी का जन्म 22 दिसम्बर, 1666 को माता गुजरी जी की गोद में, पटना साहिब में हुआ। आपके जन्म के समय आपके पिता गुरू तेग बहादुर जी, ढाके में प्रचार के लिए गए हुए थे। सन् 1670 में आसाम से वापस आकर गुरू जी पटने पहुंचे और अपने बेटे को पहली बार देखा। गुरू गोबिन्द सिंघ जी उस समय साढ़े तीन वर्ष के थे। कुछ वक्त ठहर कर, आपके पिता गुरू तेगबहादुर आनन्द पुर साहिब आ गए।

पटने में बाल गोबिन्द राय जी, जब अन्य बच्चों के साथ खेलने निकलते तो सब बच्चे आपको अपना सरदार मानते थे। तीर-कमान व सैनिक साज समान वाले खेल आप अपने साथियों के साथ खेलते। पटने में ही एक पंडित शिवदत्त आपके चरणों का सेवक बना। राजा फतेह चन्द मैणी और उसकी रानी आप पर इतनी प्रसन्न हुई कि आपके दर्शन करके उसे संतान-सुख की अनुभूति हुई। पटने में आपने कई चमत्कार किए। अपने साथियों में आपने ऐसा उत्साह भर दिया कि जो भी नवाब उधर से निकलता, उसको ललकारने लगते। आपने सबका डर एक दम निकाल दिया था।

जब गुरू तेगबहादुर साहिब आनन्दपुर साहिब पहुंचे, तो परिवार को पटने से बुला भेजा। इस पर बिछोड़ के कारण पटना निवासियों की हालत बड़ी गम्भीर थी। उनको आपकी जुदाई, आपकी याद तड़पा रही थी। पांच साल आपने पटने में बिताए थे। पटने को छोड़ कर आप आनन्दपुर पहुंचे। यहाँ आपको फारसी, हिन्दी, सस्कृत, बृजभाषा आदि की शिक्षा दी गई। घुड़सवारी व शस्त्र विद्या का भी विशेष प्रशिक्षण दिया गया। हर क्षत्र में आप पिता गुरू तेगबहादुर की तरह निपुण थे।

जब 11 नवम्बर सन् 1675 मे गुरू तेगबहादुर जी दिल्ली में आकर शहीद हुए तो आप गुरूगद्दी पर बैठे। उस वक्त आपकी आयु कुल 9 वर्ष की थी।

गुरूगद्दी की जिम्मेवारी संभालने के बाद आपने संगतों में जोश भरना शुरू किया। गुरू तेगबहादुर साहिब की शहीदी के बाद यह आवश्यक हो गया था कि सैना तैयार करके, हकूमत से टक्कर ली जाए। सिखी में शस्त्र विद्या के शौक को और तेज कर दिया गया। 52 कवि रखकर, वीर रस पर भरपूर साहित्य तैयार करवाया। सन् 1682 में आपने एक बड़ा नगारा तैयार करवाया, जिसका नाम रणजीत नगारा रखा गया। जब नगारे पर चोट पड़ती तो सिखों में जोश पैदा हो जाता, उनका अन्तंमन झुनझुना जाता। शस्त्र विद्या के साथ साथ राग विद्या का भी विशेष प्रबन्ध किया। गुरू जी खुद राग विद्या में निपुण व शौकीन थे। आपने आनन्दपुर में लंगर की प्रथा शुरू की और जाति भेद रखने वालों पर करारी चोट मारी।

सन् 1684 से 1687 तक आप रियासत नाहन में रहे। आपने नाहन के राजा मेदनी प्रकाश एवं श्रीनगर के राजा फतेह शाह की सुलह करवा दी। यमुना के किनारे, सन् 1685 में पॉऊंटा साहिब गुरुद्वारा बनवाया। यहाँ पर आपने जाप साहिब, सवैये और अकाल उसतति बाणियों की रचना की। संगतों में वीर रस पैदा करने के लिए, कई सम्मेलन किए जाते। यहाँ से करीब 15 कोस की दूरी पर गांव सिढोरा था। सिढोरा का पीर सैयद बुद्धू शाह आप का सेवक बना, जिसने 500 पठानी फौज गुरू जी को भेंट की थी।

15 अप्रैल 1687 में भंगाणी का युद्ध हुआ। कहिलूर के राजे भीम चन्द ने पहाड़ी राजाओं को साथ लेकर गुरू जी पर हमला कर दिया। पॉऊटे से 7 मील पूर्व की ओर, यमुना और गिरी नदी के बीच वाले स्थान पर, यह युद्ध हुआ। इस युद्ध में गुरू जी की बुआ, बीबी वीरो, पाँचो पुत्रों और मामा कृपाल चन्द ने भाग लिया। पीर बुद्धू शाह अपने चारों बेटे, दोनों भाई और 700 मुरीद लेकर युद्ध में शामिल हुआ। गुरू के सिख, महन्त कृपाल दास ने मोटे डण्डे से हयात खां का सिर फाड़ दिया। पहाड़ी राजे हार गए। बीबी वीरो जी के बेटे संगो शाह और जीत मल शहीद हो गए। पीर बुद्धू शाह के भी दो बेटे और एक भाई शहीद हो गए। कई और सिख भी शहीद हो गए। राजा हरी चन्द तथा तीन पहाड़ी राजे मारे गए। गुरू जी ने अगले दिन पीर बुद्धू शाह को सम्मान में एक कटार, सुन्दर पोशाक और अपने हाथों से लिखा 'हुकमनामा' प्रदान किया। बुद्धू शाह ने वह कंघा भी माँग लिया जो गुरू जी सिर में लगा रहे थे। उसमें कुछ बाल भी अटके हुए थे। आपने आधी दस्तार बुद्धू शाह को और आधी दस्तार कृपाल दास को उनके सम्मान में भेंट कर दी।

भंगाणी के युद्ध के बाद गुरू जी अक्तूबर 1687 में वापिस आनन्द पुर आ गए। दिसम्बर, 1704 तक वे वहीं रहे। यह करीब-करीब 17 वर्ष का समय था।

सन् 1688 में नदौन का युद्ध जम्मू के नवाब अलफ खां से हुआ। सन् 1689 में हुसैनी का युद्ध हुआ, जिसमें पहाड़ी राजाओं ने हुसैन खां द्वारा आक्रमण करवाया था। दोनों युद्धों में गुरू जी की जीत हुई और

राजाओं को फिर मुंह की खानी पड़ी।

सन् 1697 में भाई नन्द लाल जी गुरू गोबिन्द सिंघ जी के सिख बने। सन् 1699 को वैसाखी वाले दिन गुरू जी ने केसगढ़ नामक स्थान पर 'पांच प्यारे' नियुक्त किए और खालसा पंथ तैयार किया। सन् 1700 से 1703 तक पहाड़ी राजाओं से चार युद्ध हुए। चारों युद्धों में गुरू जी को विजय हुई। पहाड़ी राजाओं के कहने से औरंगजेब ने दिल्ली से मुगल फौज भी भेजी, ताकि गुरू जी को पकड़ा जा सके। सन् 1704 में, मई के महीने में आनन्दपुर में आखरी युद्ध हुआ। बहुत समय तक युद्ध होता रहा। सरहिन्द का सूबेदार, वजीर खां भी सेना लेकर पहुंच गया। मुगलिया फौज ने 6 महीने तक आनन्दपुर को घेरा डाले रखा। किले के अन्दर खाने-पाने का सामान खत्म हो गया। आखिर 20-21 दिसम्बर को आधी रात के समय किला छोड़ना पड़ा।

सिख अभी कीरतपुर से कुछ आगे ही गए थे कि शत्रुओं के दल ने फिर हमला कर दिया। सिरसा नदी में पानी पूरे जोश-ओ-खरोश पर था। सरसा नदी पर भयानक युद्ध हुआ। माता गुजरी जी तथा छोटे साहिबजादे भी बिछुड़ गए। गुरू जी चमकौर साहिब पहुंचे। 40 सिखों ने 10 लाख फौज से बड़ी बहादुरी से टक्कर ली। बड़े साहिबजादे, अजीत सिंघ और जुझार सिंघ दुश्मनों के छक्के छुड़ाते शहीद हो गए। पांच सिखों के निर्णय को सम्मान देते हुए,आप चमकौर की गढ़ी छोड़ कर माछीवाड़ के जंगलों में जा पहुंचे। माछीवाड़ से हेहड़ा तक 'उच्च के पीर' बन कर गए। 27 दिसम्बर, 1704 को दोनों छोटे साहिबजादे भी दीवारों में चिनकर शहीद कर दिए गए।

गुरू जी ने दीने गांव पहुंच कर औरंगजेब को एक चिट्ठी लिखी जिसको ज़फ़रनामा (जीत की चिट्ठी) कहते हैं। यह जफरनामा भाई दया सिंघ लेकर गए।

8 मई, 1705 को मुक्तसर में मुगल फौजों से घमासान युद्ध हुआ जिसमें माई भाग कौर और भाई महां सिंघ जत्थेदार, बाकी सिखों के साथ बड़ी बहादुरी से लड़े। भाई महां सिंघ जी शहीद हो गए। वैरी दल हार कर भाग गया। शहीद सिखों का जहां अन्तिम संस्कार हुआ, वहां अब गुरुद्वारा शहीद गंज है।

मुकतसर से गुरु जी तलवण्डी साबो पहुंचे। गुरु जी यहां एक वर्ष तक रहे। भाई डल्ले की परीक्षा ली और अमृतपान कराके उसे भाई डल्ला सिंघ का नाम दिया। यहां पर गुरु जी ने भाई मनी सिंघ से गुरू ग्रंथ साहिब की बीड़ तैयार करवाई, जिसमें गुरू तेगबहादुर जी की बाणी भी शामिल करवाई गई।

अक्तूबर, 1706 में आप दक्षिण की ओर चले गए। 3 मार्च, 1707 को औरंगजेब मर गया। बहादुर शाह ने तख्त पर बैठने के लिए गुरू जी से सहायता मांगी। गुरू जी ने भाई दया सिंघ और भाई धर्म सिंघ के नेतृत्व में एक जत्था भेजा। बहादुर शाह की विजय हुई। तख्त पर बहादुर शाह बैठा। उसने गुरू जी को बड़े प्यार से कीमती उपहार पेश किए। गुरू जी उस समय आगरे में थे। अगस्त, 1707 से सितम्बर, 1708 तक गुरू जी, बहादुर शाह के साथ रहे। सितम्बर, 1708 में आप नांदेड़ पहुचे। नांदेड़ में लछमन दास को मिले। उसको सिख बना कर उसका नाम बन्दा सिंघ बहादुर रखा। आपने उसे पंजाब में भेज दिया।

18 अगस्त, 1708 मे वजीर खां, सूबा सरहंद के भेजे हुए दो पठानों ने एक रात धोखे से गुरू जी को कटार मार दी। गुरू जी ने एक पठान को तो वहीं खत्म कर दिया, दूसरा पठान सिखों के हाथों मारा गया। एक जर्राह को बुला कर जख्मों पर पट्टी कराई गई। जख्म ठीक होने शुरू हो गए।

1699 की बैसाखी वाले दिन, पांच प्यारों द्वारा अमृत मर्यादा चला कर, गुरू जी ने देहधारी गुरु प्रणाली को बन्द कर दिया। फिर 22-23 दिसम्बर, 1704 की रात को, चमकौर में खालसे की बहादुरी देख कर गुरु जी ने समूह खालसे को गुरुगद्दी दे दी। देहधारी गुरु को समाप्त करने का यह दूसरा कदम था। अब 7 अक्तूबर, 1708 में आपने अपना अन्तिम समय नजदीक जानकर एक दीवान सजाया और हुकम दिया कि आज से हमारे गुरु 'गुरु ग्रंथ साहिब' हैं। अब कोई देहधारी गुरु नहीं होगा। गुरु ग्रंथ साहिब को माथा टेक कर गुरु ग्रंथ साहिब को स्थाई गुरगद्दी दे दी।

आपके बाद बन्दा सिंघ बहादुर ने पंजाब में जाकर, दुश्मनों से गिन-गिन कर बदले लिए। सरहिंद की ईंट से ईंट बजाकर, सरहिंद

के सूबेदार, वजीर खां को पकड़ कर, उसे उसके कर्मों की सजा दी। उसे घोड़े से बांध कर, पूरे सरहिंद में घुमाया गया, जहां वजीर खां की मौत हो गई।

—: o :—

बैसाखी

बैसाखी सिखों का बड़ा प्यारा त्यौहार है। बैसाखी खालसे का जन्म-दिन है। गुरु नानक देव जी के समय से ही सिखों को केश रखने के लिए प्रेरित किया जाता था। गुरु नानक काल से ही सिख धर्म की यह विषताएँ थीं कि सिख शराब कहीं पीएंगे और अन्य नशा नहीं करेंगे। सिख देवी देवताओं की पूजा नहीं करेंगे। सिख तीर्थ स्नान में विश्वास नहीं रखेंगे। व्रत नहीं रखेंगे। सन्त साधुओं को प्रणाम नहीं करेंगे। सिख गुरुबाणी को मानेंगे। जो गुरबाणी कहेगी उसी के अनुसार जीवन मार्ग पर चलेंगे। सिख केवल वाहिगुरु को ही मानेंगे। जो सिख इन बातों को मानता था, गुरु जी उसे ही अपना सिख बनाते थे। सिख 'चरण पाहुल' देकर बनाया जाता था। चरण पाहुल को चरणामृत भी कहते हैं। सिख बनने से पहले चरण पाहुल लेना आवश्यक था।

छटे गुरू, गुरू हरिगोबिन्द जी ने शस्त्र धारण करने का आदेश दिया था। अब सिख शस्त्र भी रखते थे। तलवार पहनते थे। बन्दूक चलाते थे। अब वो अत्याचारियों से युद्ध भी करते थे। सिख बड़े बहादुर होते है। गुर बाणी का ज्ञान उन्हें बहादुर बना देता है।

पहले सारे गुरू, चरण पाहुल देकर सिख बनाते थे। दसवें गुरू ने सिख बनाने का तरीका बदल दिया। उन्होंने 'चरणपाहुल' को 'खण्डे के अमृत' में बदल दिया। अब सिख बनने के लिए अमृतपान करना जरूरी है।

गुरू जी ने बैसाखी वाले दिन सिखों की परीक्षा ली। उन्होंने सिखों से सिर मांगे। पहले दया राम जी आए। उन्होंने सीस भेंट किया। फिर धर्म चन्द जी आए, फिर हिम्मत राय जी फिर मोहमक

चन्द जी आए और फिर साहिब चन्द जी आए। सबने सीस भेंट किए।

गुरू जी ने और सिर नहीं मांगे। सिख परीक्षा में पास हो गए। गुरू जी ने उनका अमृतपान कराया। उनको 'प्यारे' कहा। अब उनके नाम भी बदल दिए।

नाम इस प्रकार है—

1. भाई दया सिंघ जी।
2. भाई धर्म सिंघ जी।
3. भाई हिम्मत सिंघ जी।
4. भाई मोहकम सिंघ जी।
5. भाई साहिब सिंघ जी।

फिर गुरू जी ने पाँच प्यारों से स्वयं अमृतपान किया तो आपका नाम गुरू गोबिन्द राय से गुरू गोबिन्द सिंघ हो गया। अब गुरू जी चरणपाहुल नहीं देते थे। अब पांच प्यारे अमृतपान करवाने लगे। गुरू जी ने अमपान कराने का अधिकार सिखों को दे दिया। कोई पाँच सिख जो रहत में पक्के हों, गुरू ग्रंथ साहिब के सम्मुख, अमृत तैयार करते हैं। अमृतपान करके ही हम सिख बनते है। हमारे नाम के साथ सिंघ लग जाता है। सिंघ शेर को कहते हैं। शेर बहादुर होता है। इसी प्रकार सिख भी बहादुर होता है।

'कौर' शब्द का अर्थ है, 'कँवर'। राजाओं महाराजों की लड़कियों को 'कंवर या 'कुमार कह कर बुलाया जाता था। यह उपाधि केवल उनके लिए ही थी मगर गुरू जी ने अमृतपान करवा कर यह उपाधि सब सिख स्त्रियों को दे दी।

हमें बैसाखी का त्योहार याद रखना है, क्योंकि इस दिन हमारी परीक्षा ली गई थी। हम परीक्षा में पास हुए थे और अमृतपान करके 'खालसा' बने थे।

शिक्षा :—हमें गुरू का सिख बनना है। सिख अमृतपान करके बनते है। अमृत हमको बहादुर बनाता है। अमृतपान करके सब डर दूर हो जाते हैं। अमृतपान किए बिना हम सिख नहीं कहलवा सकते।

बड़े साहिबज़ादे

बाबा अजीत सिंघ व बाबा जुझार सिंघ श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी के बड़े साहिबजादे थे। बाबा अजीत सिंघ जी का जन्म सन् 1686 में पौंटा साहिब में माता सुंदरी जी की गोद से हुआ था।बाबा जुझार सिंघ जी का जन्म सन् 1690 में आनन्दपुर साहिब में हुआ था। साहिबजादों की पढ़ाई-लिखाई गुरूजी की निगरानी में हुई। बचपन में ही घुड़ सवारी, शस्त्र-विद्या, तीर-अंदाजी में साहिबजादों को निपुण कर दिया गया था।

एक बार आनन्दपुर साहिब में दीवान सजा हुआ था कि एक ब्राह्मण, जिस का नाम देवदास था, रोता-बिलखता हुआ दीवान में पहुंचा। वह होशियारपुर के नजदीक, एक गाँव का रहने वाला था। गुरू जी ने ब्राह्मण को चुप करवाया और रोने का कारण पूछा। ब्राह्मण कहने लगा कि मैं विदाई लेकर आ रहा था कि मेरी पत्नी, ब्राह्मणी, को पठानों ने छीन लिया है! मैंने बहुत चीख पुकार की, पर मेरी किसी ने नहीं सुनी है। उन्होंने मुझे पकड़ कर बहुत मारा है तथा मेरी पत्नी को उठाकर, ले गए हैं। अब मैं आपकी शरण में आया हूं, मेरी सहायता करो व मेरी ब्राह्मणी मुझे वापिस दिलवाओ।

गुरू जी ने एक सिख को आदेश दिया कि साहिबजादा अजीत सिंघ को बुलाओ। साहिबजादा अजीत सिंघ हाज़िर हो गया। गुरू जी के चरणों पर नमस्कार करके पूछने लगा, "पिता गुरू जी! मेरे लिए क्या आज्ञा है ?" गुरू जी ने साहिबजादे को सारी बात समझाई और कहा कि बस्सी के पठान, जाबर खां ने इस ब्राह्मण की पत्नी छीन ली है। आप सिखों को लेकर जाओ और बिजली की तेजी से ब्राह्मणी को छुड़वा कर इस ब्राह्मण को सौंप दो। जाबर खां को उसके किए की सजा दी जाएगी।

साहिबजादा अजीत सिंघ ने घोड़े को लगाम दी। तलवार हाथ में संभाल कर 100 सिखों को साथ ले लिया और ब्राह्मण को भी घोड़े पर बिठा लिया। आधा दिन नहीं बीता था कि उन्होंने बस्सी के पठानों पर जाकर धावा बोल दिया। हवेली का दरवाजा तोड़ कर

अन्दर चले गए। पठानों ने सिखों को अन्दर आता देखकर, "सिख आ गए! सिख आ गए!! का शोर मचा दिया। किसी पठान की हिम्मत नहीं हो रही था कि सिखों से टक्कर ले सके। जाबर खां, भीतर के कमरे में छुप गया। सिखों ने घबराये हुए जाबर खां को पकड़ लिया। ब्राह्मण ने दोषी जाबर खां को पहचान लिया। ब्राह्मणी को अन्दर से खोज कर, ब्राह्मण के हवाले कर दिया गया। इसके अतिरिक्त किसी स्त्री को कुछ नहीं कहा गया और न ही किसी चीज को हाथ लगाया। साहिबजादा अजीत सिंघ जी जाबर खां, पठान को घोड़े के साथ बांध कर तथा ब्राह्मण को साथ लेकर आनन्दपुर साहिब पहुंचे। ब्राह्मणी ब्राह्मण को सौंप दी गई तथा जाबर खां को उसके कर्मों की कड़ी सजा दी गई। गुरू जी साहिबजादा अजीत सिंघ के इस कारनामे पर अति प्रसन्न हुए।

21 दिसम्बर, 1704 को गुरू जी आनन्दपुर साहिब का किला छोड़ कर 40 सिखों के साथ सरसा नदी को पार करके, चमकौर साहिब पहुंचे। यहां पर चौधरी बुधी चन्द की एक कच्ची गढ़ी थी। यहां पर गुरू जी, बड़े साहिबजादे व 40 सिखों ने 10 लाख फौज का सामना किया। जब कुछ सिख शहीद हो गये तब बाकी सिखों ने गुरू जी को प्रार्थना की, "गुरू जी आप साहिबजादों को साथ लेकर गढ़ी से बाहर चले जायें।" गुरू जी ने उत्तर दिया, "आप कौन से साहिबजादों की बात कर रहे हैं, आप सब ही मेरे साहिबज़ादे हो।" उसके बाद गुरू जी ने साहिबजादा अजीत सिंघ को तैयार किया। शस्त्र सजाये; पांच सिख साथ देकर गढ़ी में से युद्ध के मैदान में भेज दिया। साहिबज़ादा अजीत सिंघ ने जब तीर चलाये तो मुग़ल फौज अल्ला-अल्ला पुकारने लगी। तीरों के बाद जब आपने तलवार के जौहर दिखाये तो शत्रु-दल हैरान रह गया। आपने कवच से ढके हुये एक मुग़ल सरदार को ऐसा तीर मारा कि जब वह तीर खींचने लगा, तो तीर शरीर के बीच हो टूट गया। जब आपका घोड़ा ज़ख्मी हो गया तब आप पैदल ही दुश्मनों के छक्के छुड़ाने लगे। गुरू जी साहिबजादे की बहादुरी को गढ़ी में से बड़ी प्रसन्नता से देख रहे थे।

कई दुश्मनों को मार कर, साहिबजादा अजीत सिंघ जी शहीद हो गये।

अब जुझार सिंघ की बारी थी। पिता गुरू जी ने उन्हें भी पांच सिख देकर युद्ध के मैदान में भेज दिया। जैसे ही साहिबजादा युद्ध के मैदान में आया, मुगल फौज ने एकदम हमला कर दिया। गुरू जी ने यह देख कर गढ़ी में से ही तीरों की वर्षा आरम्भ कर दी, ताकि साहिबजादा अपने करतब दिखाये बिना ही शहीद न हो जाये। तीरों की वर्षा के सहारे बाबा जुझार सिंघ भी आगे बढ़ कर शत्रुओं के छक्के छुड़ाने लगे। बड़ा घमासान युद्ध हुआ। कई शत्रुओं को पार उतार कर, बाबा जुझार सिंघ भी शहीद हो गये। शहीद होने के समय बाबा जुझार सिंघ जी की आयु 15 वर्ष व बाबा अजीत सिंघ की आयु 18 वर्ष के लगभग थी।

—+—

छोटे साहिबज़ादे

गुरू गोविन्द सिंघ जी के चार साहिबजादे थे—बाबा अजीत सिंघ जी, बाबा जुझार सिंघ जी, बाबा जोरावर सिंघ जी और बाबा फतेह सिंघ जी।

पहाड़ी राजा व मुसलमान हाकिम, सिखों को भी, और लोगों की भांति अपना गुलाम बनाना चाहते थे। परन्तु सिख उनकी हकूमत नहीं मानते थे। इसलिए वह सिखों पर फौजें चढ़ाकर ले आते थे। एक बार पहाड़ी हिन्दू राजाओं व मुगल हाकिमों ने आनन्दपुर को घेर लिया। यह घेरा लगभग सात महीने तक रहा। गुरु के सिख अनेक मुसीबतों का सामना करते हुए भी शेरों की भांति लड़ते रहे। अब भोजन की कमी ने शरीरों को कमजोर कर दिया था और कई रोग लग गए थे। अन्त में सतगुरू जी ने फैसला किया कि यहा से निकल कर, किसी अच्छे स्थान पर जा कर, इन शत्रुओं का मुकाबला करना चाहिए। 18-19 दिसम्बर 1704 (6-7 पोष) की रात को आनन्दपुर का किला छोड़कर, यह फौज कीरतपुर होकर, सरसा नदी के पास पहुंची और शत्रुओं के साथ घमासान का युद्ध हुआ। गुरू जी ने सरसा नदी पार की।

गुरूजी, बड़े साहिबज़ादे व कई सिख, चमकौर की तरफ चले गए। छोटे साहिबज़ादे, बाबा जोरावर सिंघ जी बाबा फतेह सिंघ जी व माता गुजरीजी गंगू ब्राह्मण (जो गुरु जी के घर का नौकर था) के साथ चले गए। गंगू उनको अपने गांव खेड़ी ले गया। सरहिंद के सूबेदार मुगल हाकिम ने गुरु जी व उनके परिवार को पकड़ने के इनाम रखे हुए थे। गंगू ब्राह्मण गुरु घर का 2? साल से नौकर था। इनाम के लालच से उसका दिल बेईमान हो गया। उसने सरहिंद के सूबेदार को खबर भिजवा कर छोटे साहिबजादों व माता गुजरी जी को गिरफ्तार करवा दिया। माता जी व छोटे साहिबज़ादों को किले की बुर्ज में कैद कर दिया गया। दिसम्बर की बहुत सर्दी थी पर साहिबजादे घबराए नहीं। माता गुजरी जी उन्हें दृढ़ता से दुश्मनों का सामना करने की शिक्षा देती रहीं।

दूसरे दिन साहिबज़ादों को कचेहरी में पेश किया गया। साहिबज़ादे बाबा जोराबर सिंघ व बाबा फतेह सिंघ जी के चेहरों पर कोई भय या उदासी के चिन्ह नहीं थे। वजीर खां सरहिंद का सूबेदार था। उसने समझाया, 'आप के पिता भाई व अन्य साथी सिख, सभी शहीद हो चुके हैं। आप अब बिल्कुल अकेले हैं। आपका कोई सहारा नहीं है, इसलिए मुसलमान बन जाओ तब आप को हर प्रकार के सुख मिलेंगे। नवाब के बच्चों की तरह आपको रखा जायेगा।' साहिबज़ादे न ही सुखों के लालच में आए और न ही डरे। उनको गुरुबाणी का आश्रय था। भले ही उनकी आयु केवल 8 व 6 वर्ष की थी, पर गुरुबाणी के प्रभाव से वे बिल्कुल निर्भय हो चुके थे। उन्होंने ललकार कर कहा, 'हम अपना धर्म नहीं छोड़ सकते।" दरबारी बहुत हैरान हुए कि इतनी छोटी उमर में भी ये धर्म में इतने दृढ़ हैं, इतने निर्भीक हैं। दरबारियों ने कहा, अगर हम आप को छोड़ दें तो आप क्या करोगे?" साहिबज़ादे ने उत्तर दिया, 'हम जाकर सिखों को एकत्र करेंगे और तुम्हारे अत्याचार का अन्त करने के लिए युद्ध करेंगे।" दरबारियों ने फिर प्रश्न किया, "अगर तुम हार गए तब क्या करोगे?" उन्होंने जवाब दिया, "पराजय हमारे जीवन में लिखी ही नहीं। हम फौजें तैयार करके तुम्हारे साथ तब तक युद्ध करेंगे जब तक अत्याचार

के राज्य को समाप्त नहीं कर लेते या फिर जब तक हम शहीद नहीं हो जाते।"

वजीर खां को बहुत गुस्सा आया। उसने साहिबजादों को दीवारों में जिन्दा चडा करने का हुक्म दे दिया। मलेरकोटले के नवाब ने शिकायत की कि बच्चों के साथ वैर नहीं करना चाहिए। पर एक जलील हिन्दू, (च्चानन्द ने कहा कि इनको मार देना चाहिए, क्योंकि सांप के बच्चे सांप ही होते हैं। उस हिन्दू के दबाव डालने पर, साहिबजादों को दीवारों में जिन्दा खड़ा करके शहीद कर दिया गया। माता गुजरी को बुर्ज से नीचे गिरा कर शहीद कर दिया गया। साहिबजादे प्रसन्नता से शहीद हो गए और बिल्कुल नहीं घबराये। उन्होंने वाहिगुरू में ही ध्यान लगाए रखा।

बन्दा सिंघ बहादुर ने जब पंजाब पर हमला किया, तब सरहिंद शहर को बुरी तरह उजाड़ दिया। वजीर खां से गिन-गिन कर बदले लिए और उसको अपने कर्मों की सजा दी गई।

शिक्षा :—एक 'वाहिगुरू' के हुक्म का मान लेने से सारे डर दूर हो जाते हैं। अमृतमान करके बच्चे भी बड़ी से बड़ी शक्ति का मुकाबला कर सकते हैं। निडर होकर जीवन बिताना ही सिख का प्रथम कर्तव्य है। सिख धर्म का इतिहास इस बात की पुष्टि करता है कि प्रचार के लासानी ढंग ने ऐसे अनेक दृढ़, सिखी पर अटल रहने वाले गुर सिख पैदा किए, जिनके शरीरों को आरे से तो चाहे काट दिया गया, पर उनकी सिद्धान्तों सम्बन्धी दृढ़ता में कोई अन्तर नहीं आया। जिनके कोमल शरीर को तो उबलती हुई देगों में उबाल कर लहू-लुहान कर दिया गया, परन्तु उनके गुरमत सम्बन्धी सिद्धान्तों का कोई बाल भी बांका न कर सका। रम्बी की धार ने खोपड़ी तो अवश्य शरीर से अलग कर दी, पर धर्म के प्रतीक केशों को कायम रखने के नियम को कोई एक इंच भर पीछे नही कर सका। जिनके शरीर का अंग काट कर, विरोधी शक्तियों ने अपने दिल की भड़ास अवश्य निकाल ली, परन्तु उनके सिद्धांतों को एक इंच भी नहीं डिगा सके। जिनके शरीर को भयानक दुःख देने वाली चरखड़ी की मार तो छील कर खत्म कर गई, परन्तु उनके धार्मिक सिद्धांतों को बड़े से बड़ा नादू खां भी नहीं बदल सका।

भाई बचित्र सिंघ

भाई बचित्र सिंघ जी गुरू गोबिन्द सिंघ जी के खास सिख थे। जब आनन्दपुर साहिब के लोहगढ़ के किले को हिन्दू राजाओं (यह हिन्दू राजे जरूरत पड़ने पर सिखों के पांव पड़ते थे, पर जब खतरा टल जाता था तो गले पड़ते थे।) की फौजों ने घेर लिया तो किले के अन्दर खाने-पीने का सामान आना बंद हो गया। चारों ओर से घेरा पड़ा हुआ था। न कोई अन्दर जा सकता था न ही कोई बाहर आ सकता था। लगभग बीस दिन तक यह घेरा पड़ा रहा। दुश्मन की कोई चाल न चल सकी। आखिर उन्होंने एक नई चाल चली। लड़ाई का फैसला करने के लिए उन्होंने लोहगढ़ का किला तोड़ने की योजना बनाई। एक बहुत ही ताकतवर हाथी को शराब पिला कर, उसके माथे पर लोहे की ढाल बांध दी। शराब के नशे में हाथी चिल्लाता हुआ किले के दरवाजे की ओर बढ़ा। हाथी के पीछे उनकी फौजें भी थीं।

इस हाथी का मुकाबला करने के लिए स० बचित्र सिंघ को तैयार किया गया। भाई बचित्र सिंघ दूसरे सिखों की तरह अमृतधारी थे। वह गुरू जी की आज्ञा पर जान देने वाले सिखों में से थे। गुरू जी ने भाई बचित्र सिंघ को विशेष नोक वाला "नागनी बरछा" दिया। (यह बरछा आज भी आनन्दपुर साहिब में पड़ा है)।

भाई बचित्र सिंघ ने किले का दरवाजा खोलकर हाथी को ललकारा। वह बिल्कुल घबराए नहीं, क्योंकि गुरू उनके अंग-संग थे। उन्होंने बड़ी फुर्ती से घोड़े की रकाबों पर खड़े होकर, इस प्रकार बरछा मारा कि वह हाथी की ढालों को चीरता हुआ, उसके सिर में घुस गया। हाथी पीछे को भागा और अपनी ही फौजों को पैरों के नीचे रौंदना शुरू कर दिया। ज़ालिमों की यह चाल भी उन्हें उल्टी पड़ गई। पहाड़ी राजे, फौजों के साथ पीछे की ओर भाग पड़े। यह 'अमृत' की ही शक्ति थी, जिसने भाई बचित्र सिंघ को शूरवीर, बहादुर और निडर बना दिया था।

शिक्षा :— इस गद्य से पता लगता है कि मौत सिख को भयभीत नहीं कर सकती। अमृतपान करने से, सिखों के भीतर वीरता

का संचार होता है तथा सिख के सारे डर समाप्त हो जाते है। इस लिए हमें अमृतपान जरूर करना चाहिए।

भाई डल्ला सिंघ जी

मुकतसर के युद्ध के बाद गुरु गोबिन्द सिंघ जी साबो की तलवण्डी पहुंचे। यहां का चौधरी डल्ला 15-20 गांवों का जागीरदार था। उसने अपने पास कई सिपाही रखे हुए थे।

'आनन्दपुर साहिब का किला छोड़ने से पहले जो घटनायें गुरू जी के साथ हुईं, उसकी सारी कहानी चौधरी डल्ले ने सुनी : उसने गुरू जी से सहानुभूति प्रकट की और कहने लगा, "सच्चे पातशाह। मेरे पास इतने ताकतवर नौजवान सिपाही हैं, अगर आप मुझे उस वक्त याद करते, तो मेरे सिपाही मुगलों को मार भगाते। हम किसी प्रकार की हानि न होने देते, न आनन्दपुर साहिब बरबाद होता और न ही साहिबजादे शहीद होते। आपको इतने कष्ट भी न सहन करने पड़ते।'

गुरू जी ने देखा कि डल्ले चौधरी को अपने सिपाहियों का अभिमान है। गुरू जी ने उसको बताया कि मेरे सिख जग में जी-जान से लड़े हैं। किसी ने पांव पीछे नहीं मोड़। मुझे अभिमान है ऐसे गुरू भक्तों पर जो युद्ध में हंसकर वीरगति को प्राप्त हुए।

इन्हीं दिनों एक सिख नई बन्दूक लेकर आया। उसने गुरू जी को बन्दूक के गुण बताए और कहा, "यह बहुत दूर तक मार करती है।" डल्ले का भ्रम दूर करने के लिए गुरू जी ने कहा, भाई डल्ले ! ला कोई अपना सिपाही, हमने निशाना देखना है।" चौधरी डल्ला और उसके नौजवान सिपाही, देख कर हैरान हो गए। डल्ले ने सिपाहियों की तरफ देखा सबने मुंह फेर लिया। भाई डल्ला कहने लगा, "किसी जानवर पर निशाना बनाकर देख लो. यूं ही क्यों एक सिपाही को मारते हो।"

गुरू जी ने कहा कि इसकी परीक्षा किसी सिपाही पर ही हो सकती है। जब डल्ले का कोई सिपाही आगे नहीं आया तो गुरू जी ने अपने

सिखों को ललकारा। ललकार सुनने पर दो व्यक्ति-बाप बेटे, भाई वीर सिंघ और धोर सिंघ, जो थोड़ी दूरी पर पगड़ी बांध रहे थे, गुरु जी के सामने आ गए। एक कहने लगा, मैं नजदीक था, पहले मैंने सुना है।" दूसरा कहने लगा "पहले मैं दौड़ा था, इसलिए मैं आगे खड़ा होऊंगा।" गुरु जी ने दोनों को आगे पीछे खड़े होने का आदेश दिया। जब गुरु जी बन्दूक ऊंची करते तो दोनों सिख एड़ी उठा कर ऊपर हो जाते, बन्दूक नीचे करते तो घुटने टेक कर वे नीचे हो जाते, ताकि गुरु जी का निशाना खाली न जाए। डल्ला, यह सब देखकर हैरान था। गुरु जी ने गोली दोनों के ऊपर से निकाल दी और कहा 'तुम पास हो गए हो बस, और तुम्हारा काम इतना ही था।"

अब भाई डल्ले का अपने पास बलवान सिपाही होने का अभिमान टूट गया। वह बहुत शर्मिंदा था। गुरु जी ने कहा, "दलेरी और बहादुरी का सम्बन्ध सिर्फ भुजाओं के बल से ही नहीं होता। तेरे जवान भले ही अच्छे बलवान हैं। अच्छे लड़ने वाले भी होंगे। मगर जब उनके अन्दर विजय प्राप्ति की कामना होगी तभी वह कुछ कर सकते हैं। गुरु की निकटता से ऐसा विश्वास पैदा होता है। अमृतपान करने से गुरु से निकटता होती है।

भाई डल्ला गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा। उसका सारा अहंकार दूर हो गया। वह बोल पड़ा, "गुरु जी आप धन्य हैं; और धन्य हैं आपके सिख, जो सही अर्थों में शूरवीर कहलाने के अधिकारी हैं। मुझ पर भी कृपा करो। मुझे भी अमृतपान कराओ ताकि मेरी भी आपसे निकटता हो सके।"

भाई डल्ले ने परिवार और सिपाहियों सहित, अमृतपान किया। इस तरह चौधरी डल्ला, भाई डल्ला सिंघ बना। अमृतपान करके उसमें इतनी शक्ति आ गई कि जब सरहंद के नवाब वजीर खां ने गुरु जी को उसके हवाले करने का आदेश दिया तो भाई डल्ले ने जवाब दिया कि सूबा सरहंद, सोच-समझ कर इधर आए। यदि उसने इधर मुंह भी किया तो उसका मुंहतोड़ दिया जाएगा।

यह अमृत की ही शक्ति थी, जिसने उसके अन्दर सारे डर दूर कर के इतना आत्मविश्वास पैदा कर दिया था।

शिक्षा —अमृतपान करके गुरू के आदेश में चलने से, मनुष्य के अन्दर निर्भयता आ जाती है, उसके सारे रड समाप्त हो जाते हैं। ऐसा सिख किसी बड़े बादशाह को भी परवाह नहीं करता। हमारे लिए अमृतमान करना बहुत आवश्यक है। अमृतपान किए बिना हम सिख नहीं बन सकते।

—+—

गधे पर शेर की खाल

एक दिन साहिब सतगुरू गोबिन्द सिंघ जी महाराज का दरबार लगा हुआ था। साहिब अपने सिंहासन पर बैठे थे। रागी सिंघ ने सुरीली तथा मीठी आवाज में गुरबाणी का सुन्दर कीर्तन किया। तत्पश्चात, गुरमत के विद्वानों का ने गुरमत के सर्वश्रेष्ठ और सर्वोत्तम सिद्धांतों पर रोशनी डाली। सब को धर्म के सत्य स्वरूप को समझने और अमल में लाने की प्रेरणा दी। इतनी देर में दस पन्द्रह सिखों का एक टोला बाहर से दरबार में दाखिल हुआ। उनके पीछे बच्चे, जवान और दूसरे लोग ऊंची आवाज में हंसते हुए तथा मजाक करते आ रहे थे। इन सिखों के पास एक गधा था, जिसे वे दरबार से बाहर बाँध आए थे। आगे वाले एक सिख ने अपने कन्धे पर शेर की सुन्दर खाल लटकाई हुई थी तथा उस खाल का कुछ भाग हाथ में पकड़ा हुआ था।

जब सब सिख गुरू साहिब को शीश झुकाकर प्रणाम कर चुके, तो गुरू साहिब ने कुछ अजीब शोरगुल करते और लोट-पोट होते सिखों को देखकर, आगे वाले सिख से इसका कारण पूछा।

वह सिख सारी घटना का वृतान्त सुनाने लगा। सारी संगत उसे बड़े ध्यान से सुनने लगी। उसने कहा, "हजूर! पिछले तीन-चार दिनों से नगर के पश्चिम की ओर से निकलने वाले लोग, शेर को नगर की सीमा के पास घूमते हुए देख रहे थे। उस तरफ से आने जाने वाले लोग काफी सावधानी सहित वहाँ से गुजरते थे। इक्के-दुक्के यात्री तो शेर को देखकर, डर के मारे नगर की ओर भाग जाते थे। वे जैसे ही शेर को दूर से देखते, वैसे ही भयभीत हुए नगरवासियों को आ कर बताते। एक दो दिन में ही सारे नगर में इस शेर की चर्चा शुरू हो गई और आपके

पास भी खबर पहुंची।" सारी संगत इस घटना को बड़े ध्यान से सुन रही थी। गुरू साहिब हल्की-हल्की मुस्कुराहट से सारी संगत की ओर नजर दौड़ा रहे थे।

"खोदा पहाड़ निकला चूहा।" उस सिख ने आगे कहा, "आज सुबह नगर का कुम्हार कुछ गधे लेकर बाहर की ओर जा रहा था। इन गधों को देखकर उस शेर ने रेंकना शुरू कर दिया। उसने उस शेर को रेंकते देखकर कुम्हार को वास्तविकता समझने में देर न लगी। उसने उस शेर को जा पकड़ा। शेर को पकड़ कर वह उसकी जांच करने लगा। वास्तव में किसी ने बड़ी सावधानी से, इस गधे के ऊपर शेर की खाल मढ़ दी थी, ओर मढ़ी भी इस ढंग से थी कि दूर से इस भेद का बिल्कुल पता नहीं लगता था। कुम्हार ने इस शेरनुमा गधे की शेर वाली खाल उतार ली जो कि हम आपके पास लेकर हाजिर हुए हैं। खाल उतारने के बाद की असलीयत सामने आ गई। कुम्हार ने दो चार डंडे मारकर उस गधे को आगे लगा लिया और वह गधा अब हम बाहर बाँध आये हैं।"

सारी संगत हंसी के मारे लोट-पोट हो गई। सभी लोग इस हास्यास्पद घटना को सुन कर हसी न रोक सके। बाहर से आया वह सिख सब को तथाकथित शेर की खाल दिखा रहा था।

गुरू साहिब ने सारी संगत को सम्बोधन करते हुए कहा, "आप सब इस शेरनुमा गधे की असलियत प्रकट होने पर हंस रहे हैं, पर यह बताओ कि आप में से कौन उस शेरनुमा गधे का भाई है। छिपाने की कोशिश न करो।" संगत में कोई भी ऐसा न निकला जो शेरनुमा गधे के साथ सम्बन्ध प्रगट करता।

गुरू जी कहने लगे "सिखों में से भी कई कच्चे पिल्ले हैं। इन्होंने देखा-देखी सिखों वाला रूप तो अवश्य धारण कर लिया है पर अन्दर से जीवन सिखों वाला नहीं। केवल पहरावा सिखी वाला डालने से धर्म का वास्तविक लाभ प्राप्त नहीं होता। जिन सिखों ने अपने मन से गुरू की बाई रहिणी पर अमल नहीं किया उनकी बाहर की रहत केवल धर्म का दिखावा बन कर रह जाती है। काम, क्रोध, लोभ, मोह अहंकार पर काबू पा कर, मन में नेकी, कुर्बानी, मिठास, परोपकार के ऊंचे आदर्श पैदा करने पर बाहर की रहत शोभा देती है। बाहर की रहत

सिघों जैसी धारण करने के साथ-साथ यह भी जरूरी है कि हमारे अन्दर निर्भयता तथा शूरवीरता भी सिंघों वाली हो और धर्म की रक्षा हेतु मरने के लिए भी सदा तैयार रहें। यदि हमारा आचरण ठीक नहीं, मन में सदाचारक गुणों की कमी है और हमारा मन गुरू की बताई 'अन्दर की रहत' का धारणी नहीं, तो हमारी बाहर की रहित केवल धर्म का दिखावा ही हो सकती है, धर्म नहीं। वास्तव में दिखावे वाले लोग ही धर्म के अपमान का कारण बनते है।"

गुरू साहिब ने सारी संगत को यह भी बता दिया कि उन्होंने स्वयं ही अपने सिखों को, गुरमति के इस महान उद्देश्य को समझाने के लिए इस गधे पर शेर की खाल मढ़वा कर, नगर के बाहर छोड़ दिया था।

शिक्षा :—इस कथा से हमें यह शिक्षा मिलती है कि हमने नकली सिख नहीं बनना है, जहां हम सिखी स्वरूप धारण किए हुए हैं, वहां हमें अपने अन्दर सिखी वाले गुण भी धारण करने हैं। हमें अपने अंदर पर उपकार, मिठास, नेकी, शुद्ध आचरण, सत्य बोलना, शूरवीरता आदि गुण धारण करने हैं। पांच ककारों वाला रहन-सहन रखना है और गुरबाणी के अनुसार जीवन ढालना है।

शनि देवते का खंडन

हिन्दू समाज में विभिन्न प्रकार की इच्छाओं की पूर्ति के लिए एक प्रभु को छोड़ कर अनेक देवी-देवताओं की पूजा प्रचलित है। जैसे सुन्दरता के लिए अश्वनि कुमार (घोड़ी के पुत्र) की पूजा, दीर्घ आयु के लिए मारकंडे की आराधना, वाक्-शक्ति के लिए सरस्वती देवो की पूजा आदि प्रचलित हैं। इसी प्रकार यह अंधविश्वास प्रचलित है कि शनि देवता की पूजा न करने पर पूरा महीना बुखार रहता है या दुख क्लेश का सामना करना पड़ता है।

ऐसे अन्धविश्वासों का सिख गुरूओं ने बहुत खंडन किया है। गुरमत के अनुसार एक प्रभु (अकाल पुरख) ही दुखों को दूर करने की

शक्ति रखता है। गुरमत को दृढ़ करवाने के लिए जहां सतगुरू उपदेश करते वहाँ सिखों की परीक्षा भी साथ-साथ लिया करते थे ताकि उपदेश सिखों के जीवन में घर कर जाएं और सिख भूल कर भी मनमत न करें।

इसी तरह का एक उदाहरण गुरू गोविन्द सिंघ जी के जीवन से मिलता है। एक बार बिना किसी को बताए गुरूजी ने पहाड़ी राजाओं के दरबार में से एक मशहूर पंडित (वेदवा--जो शनि का दान लेते हैं) को न्यौता भेजा कि शनिवार को दरबार में से दान ले जावे। वेदवा ब्राह्मण बहुत प्रसन्न हुआ। उसने मन ही मन सोचा। गुरू दरबार में प्रतिदिन हजारों सिख दर्शनों के लिए आते हैं, और भांति भांति की भेंट लाते हैं। गुरू दरबार की प्रशंसा दूर-दूर तक फैली हुई है, अत: दान भी अच्छा-खासा मिलेगा। वह पंडित (वेदवा) शनिवार की सुबह ही बहुत सारे गधे लेकर आनन्दपुर साहिब आ पहुंचा। गधे बाहर बांध कर, गुरू साहिब के दरबार में जोर-जोर से "शनिचर बली, कुल बला टली" कहता हुआ हाजिर हुआ। गुरू जी ने पहले ही अपने हजूरी सिखों को यह आदेश दिया था कि वह वेदवा को अन्दर आने दें।

गुरू गोविन्द सिंघ जी ने भरे दरबार में जहां बहुगिनती में सिख दूर-दूर से दर्शनों के लिए आए थे दीवान नंद चंद जी को कहा कि पंडित जी को शनि देवता का दान देना है जो सब सिखों को शनि देवता के प्रकोप से बचाया जा सके। जैसे हर एक देवी-देवते की सवारी भिन्न भिन्न है उसी प्रकार प्रत्येक देवी-देवते की भेंट भी अलग-अलग है। कोई देवता चूरमा चढ़ाने पर प्रसन्न होता है तो कोई मदिरा चढ़ावे से, कोई मांस से, तो कोई देवी फूल पतासे और खीर चढ़ाने पर। इसी तरह शनि तेवता को खुश करने के लिये उड़द (मांह) की दाल, सरसों का तेल और लोहा दान किया जाता है। गुरू जी की आज्ञा के अनुसार दीवान नंद चंद जी ने ये सब वस्तुए भारी मात्रा में, पंडित जी को दान कर दीं और गुरू जी ने पंडित को यह भी कह दिया। कि अब सिखों से शनि की करोपी दूर हो जानी चाहिये। पंडित जी ने सारा माल गधों पर लादा और खुशी-खुशी चलते बने।

गुरसिख दीवान में बैठे यह सब देख रहे थे और मन-ही-मन सोच

रहे थे कि आज गुरु साहिब क्या कर रहे हैं ? वे तो रोजाना हमें यह बताते हैं कि एक प्रभु (अकालपुरख) के इलावा किसी को नहीं मानना, और आज शनि देवते की करोपी से बचाव का उपाय कैसा ? कुछ उदासीन किस्म के सिख चुप कर के बैठे रहे, पर जिन्होंने गुरमत पर सही अमल किया था, वे गुरमत के विरुद्ध काम कैसे सहन करते ?

संगत में से कुछ सिख उठे और पंडित को थोड़ी दूरी पर जा पकड़ा और उससे पूछा कि वह माल कहां ले जा रहा है ? उसे माल वापिस करने के लिए कहा गया। इस पर पंडित कुछ बिगड़ने लगा और बोला, इस माल को ब्राह्मण ही पचा सकता है। यदि यह दान का माल किसी ने छीना तो शनि देवता सिखों पर बहुत रुष्ट होंगे, और उनको बहुत सी मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा। यह सब बातें सुन कर सिख हंसे और बोले, पंडित जी आप यह बातें अपने पास ही रखिये। आप और लोगों को तो मूर्ख बना सकते हैं, लेकिन गुरु के सिख ऐसी फोकट बातें नहीं मानते। हम अब तुम्हारे जाल में फंसने वाले नहीं। आपका भला इसी में है कि माल को छोड़कर नौ दो ग्यारह हो जाओ। यह सब देखकर पंडित जी कांपते हुए अपना सा मुंह लेकर भाग गए।

सिख सभी वस्तुएं लंगर में ले आए। दाल को पीसकर तेल में उसके बड़े बनाए और सबने खाए, और कारीगरों से लोहे के कड़े बनवाकर सबने हाथों में पहन लिये। जब गुरु साहिब ने सबके हाथों में कड़े पहने देखे, तो सिखों से पूछताछ की। तब गुरु जी को सिखों द्वारा बेदवा पंडित की सारी बात बताई गई। यह सुनकर गुरु जी बहुत खुश हुए और बोले कि तुम लोगों ने सही तरीके से गुरु नानक साहिब की दी हुई शिक्षा को ग्रहण किया है। 1699 ई० को बैसाखी को जब खालसा पंथ की स्थापना की गई तो इस घटना को सजीव रखने के लिए 'कड़ा' सिखों के अन्य ककारों कंघा केश कछहरा कृपाण सहित पहनना आवश्यक किया जो सिख पंडितों के जाल से मुक्त रहें।

परन्तु आज कल तो सिखों की दशा बहुत दयनीय हो गई है। वे गुरु जी के उपदेशों को भूल कर वैष्णों देवी, नैना देवी, शनि और मंगल को मना रहे हैं। दुख तो इस बात का है कि एक तरफ तो वे श्री

गुरुग्रंथ साहिब जी के अखण्ड पाठ करवा रहे हैं, दूसरी तरफ गुरमत निशिध कर्म-कांड कर रहे हैं। यह सब इसलिये हो रहा है कि लोगों ने पाठ को तो एक रस्म बना लिया है। गुरू साहिब की शिक्षा क्या है— इस बात पर हमें ध्यान देना है। इसी में सिखों की चढ़दीकला है।

———

माता भाग कौर जी

तरनतारन से छः मील की दूरी पर, 'झबाल' नाम का एक गांव है। मुसलमानों के राज्य में इस गाँव में गुरसिखी प्रगति पर थी। गुरु नानक साहिब के समय आप ने ही यहां सुलतानपुर को आते-जाते सिखी की नींव रखी थी।

पट्टी के आसपास के क्षेत्र में उस समय बहुत से हिन्दू सखी सरवर के अनुयायी बन चुके थे। इनको 'सुलतानिये' या 'सरवरीये' कहा जाता था। 'झबाल' गांव में कुछ हिन्दू परिवार भी सुलतानिये बन चुके थे।

श्री गुरु अर्जुन देव जी के समय, यहां एक बहुत ही प्रसिद्ध हिन्दू चौधरी सुलतानियां बन चुका था। इसका नाम अबुल्ल खैर था। इसके लड़के का नाम लंगाहा शाह था। यह ढिल्लों जाति के जाट थे। अतः इससे पता लगता है कि ये पहले हिन्दू थे।

चौधरी लगांहा गुरसिखों की संगत में रहने से गुरु अर्जुनदेव जी के दरबार में आ गया। गुरु साहिब के व्यक्तित्व का उस पर इतना प्रभाव पड़ा कि वह गुरु जी का पक्का शिष्य बन गया और उसके सारे परिवार ने 'सुलतानिये' मत को त्याग दिया। श्री दरबार साहिब (हरमन्दिर साहिब) के निर्माण में इन्होंने बहुत सेवा की थी।

जब गुरू अर्जुन देव जी बलिदान के लिए लाहौर गये, तो उनके साथ पांच सिख भी गये थे, जिनमें भाई लंगाहा जी भी थे। उसने गुरू जी के साथ बहुत कष्ट सहन किये थे। बाकी चार सिख—भाई जेठा जी, पैड़ा जो, भाई विदिआ जो और भाई पराण जी गुरू जी के साथ थे।

भाई संगाहा जी का एक भाई और था, जिसका नाम 'पैरो शाह था। यह मुसलके ? नाम वाला सुलेतानियाँ हिन्दू था। यह भी अपने परिवार में आये गुरसिखी के प्रभाव से सिख बन गया; और गुरू के दरबार में गुरू जी के दर्शन करने के लिए आया करता था। इसके लड़के का नाम मालो शाह था। यह भी गुरू का सिख था और छटे गुरू हरगोबिन्द साहिब के समय गुरू घर की सेवा करता था। इनके घर में एक बालिका का जन्म हुआ, जिसका नाम सिख इतिहास में माता भागो व माता भाग कौर करके प्रसिद्ध है।

माता भाग कौर, अपने पिता जी के साथ गुरू तेग बहादुर जी के दरबार में एक दो बार जाने से गुरसिखी के नियमों से प्रभावित होकर सुदृढ़ हो गयी। इसके परिवार के सदस्य गुरू गोबिन्द सिंघ जी को गुरूगद्दी मिलने के समय आनन्दपुर साहिब गये थे और माता भाग कौर भी साथ गयी थीं। इसके बाद सन् 1699 की बैसाखी को गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने चरण पाहुल के स्थान पर खडे की पाहुल की रीति चलाई और खालसा प्रगट किया। तब माता भाग कौर के परिवार के कई सदस्य, अमृतपान करके वापिस लौटे।

सन् 1701 में पहाड़ी राजाओं ने गुरू साहिब के साथ दुबारा युद्ध छेड़ दिया। युद्ध सन् 1705 तक जारी रहा। जब पहाड़ी हिन्दू राजाओं की गुरू परिवार के साथ धक्केशाही की खबर, अमृतसर पहुची तब बहुत से नौजवान, जिनमें से मसंद दुनीचन्द के पौत्र स०अनूप सिंघ व स० सरूप सिंघ जो कि जत्थेदार थे, श्री आनन्दपुर जाने के लिए तैयार हो गये। जब माता भाग कौर को यह खबर मिली तो वह भी अपने भाइयों के साथ तैयार हो गयीं लेकिन परिवार के अन्य सदस्यों ने कहा कि परिवार में से नौजवान तो गुरू सेवा के लिए जा रहे हैं, आप किसी अन्य अवसर पर चले जाना। माता जी ने बहुत जोर लगाया, लेकिन उनके पिता ने न जाने दिया और कहा कि जब कभी मौका बनेगा तब आपको ले चलेंगे।

इन दोनों भाइयों ने सिखों में प्रचार किया और प्रेरणा दी ताकि ज्यादा से ज्यादा नौजवान इस मौके पर अपने को पेश करें क्योंकि गुरू सब संम्बंधियों से प्यारा है। 'गुरू' सबसे बड़ा है। यदि गुरू से

सम्बन्ध है तो सभी से सम्बन्ध है, नहीं तो कोई नहीं। इस वाक्य को सुनते ही लगभग 50 नौजवान सामने आये। कुछ सिख नौजवान तैयार होकर गांव में निकल पड़े ताकि और गुरसिखों को भी यह बता कर जत्थे के साथ चलने की प्रेरणा दे सकें। इसी तरह के जत्थे बहुत जगह तैयार हो रहे थे। एक संदेशवाहक गुरू जी को यह बताने के लिए भेज दिया कि एक और जत्था दुनी चन्द के पौत्रों के नेतृत्व में आ रहा है।

इसी तरह सिख भेस बदल-बदल कर, आनन्दपुर साहिब को चल पड़े। इस लड़ाई में गुरू जी की जीत हुई। कुछ समय पश्चात् छोटे-छोटे झगड़ों के बाद, खबर फैल गई कि बाई धार (22 पहाड़ी राजाओं) के राजाओं ने मुगलों, रंघड़ों तथा सूबेदारों की सहायता से फिर हमला कर दिया है। यह सुनते ही पंजाब के सभी स्थानों से सिख गुरू जी की सेवा के लिए आनन्दपुर की ओर चल पड़े।

माता जी के गांव के आस पास से भी सिख जाते रहते थे। कभी कभी सिख उनके यहां आकर भी ठहरा करते थे। अन्त में एक खबर पहुंची कि आनन्दपुर अब बच नही सकता। फिर एक संदेश मिला कि गुरू जी आनन्दपुर को छोड़कर मालवा आ गये हैं। चमकौर साहिब की महान शहीदी घटना की भी खबर चारों ओर फैल गयी। सरहिंद में छोटे साहिबजादों की शहीदी की अत्यन्त दर्दनाक घटना की खबर भी सारे पंजाब में फैल गयी। जब वजीर खां, सूबा सरहिंद को रिपोर्ट मिली कि गुरू गोबिन्द सिंघ जी ठीक-ठाक 'दीना गांव' भाई खमीरा व शमीरा के पास ठहरे हुए हैं और खालसे को फिर तैयारी कर रहे हैं, वह एक बार फिर गुरू जी पर हमला करने को तैयार हो गया। इस बात की खबर सुनकर खालसा पंथ में फिर गुस्से की लहर उठ गयी। इस समय माता भाग कौर के दिल में गुरू जी के लिए उमड़ी हुई श्रद्धा व प्यार न रुक सका और वीरता से खून खौल उठा। वह अपने पति से कहने लगीं "चलो गुरू जी को इस शरीर को अर्पित कर दें। वैसे भी किसी-न किसी दुख के कारण मरना है। हम सुख में बैठे रहें तथा गुरू जी का 'सिखी चमन' उजड़ता हुआ देखें, सिखों के कत्ल होने की खबर सुनें साहिबजादों के शहीद होने की खबर कानों में पड़, शूरवीर बच्चों को दीवार में जिन्दा चिनवाने दिया जाय तथा उनकी शहीदी की खबर

दिल में छेद कर दे। दातार गुरूजी संसार की रक्षा के लिए हमारे तुम्हारे जैसी पर्जा के भले की खातिर लड़ें तथा बरबाद हो रहे हों, और जब उनकी जान भी जालिम दुश्मन की जुल्मी नजर से बचती दिखाई न पड़े, तो लाहनत है हम पर कि हम घर बैठे रहें।

माता भाग कौर का पति भी गुरू जी का श्रद्धालु था। कहने लगा कि अब तो जीना हराम है, अब जीने का कोई मतलब नहीं। माता भाग कौर यह सुनकर उठीं तथा घोड़े पर बैठ कर सारे गांव में सूचित कर दिया और ललकारा कि चलो जिसने भी गुरूजी पर अपने आप को न्यौछावर करना है। इस तरह गांव के सिखो को तैयार किया जो झबाल, आ कर इकट्ठे हो गये। (यह भी कहा जाता है कि ये लोग पट्टी में एकत्रित हुए थे)। खालसे का यह दल तैयार हो कर, मालवे की ओर गुरू जी के पास चल पड़ा। वे 'रूपीआणा' से निकल कर खिदाणे के पास भागकर गुरू जी की सेवा में हाजिर हुए। जिन मुख्य सिंघों के नाम इतिहास में मिलते है वे चालीस के लगभग थे। जितने भी पहुंचे थे सभी हर प्रकार के लड़ाई के संसाधनों से सुशोभित थे और घर से गुरू जी के अधीन सेना में लड़ने के लिए आये थे। यहां सिंघ को गांव से ही जत्थेदार बना कर लाया गया। रास्ते में खर्च आदि के लिए भी सामान था सारा जत्था सौं के करीब सिखों का था परन्तु उस में 'माझे' के इलावा पंजाब के कई जगहों के सिख भी थे।

गुरू जी ने लड़ाई का सारा बन्दोबस्त किया। वहां बेरीयों का एक बहुत बड़ा जंगल था। सिखों ने बड़ी बड़ी चद्दरें पेड़ों पर डाल दीं जिससे मालूम होता था कि तम्बू लगाये गये हैं। पानी के लिए बड़े तालाब को अपने कब्जे में रखने के लिए ही ये मोचो काफी आगे जाकर बनाये गये क्योंकि लड़ाई के मैदान में पानी न होने के कारण फौजों की बहुत बुरी हालत हो जाती है। गुरु जी ने अपनी फौज को अलग-अलग जत्थेदारों में बांट दिया तथा अलग-अलग जगह पर नियुक्त किया। गुरू जी आप टीले के ऊपर बैठ गये। सरहिन्द के सूबेदार की जब फौजें पहुंचीं तो बड़ी भयानक लड़ाई हुई। अन्त में खालसे की जीत हुई। दुश्मनों को जब मुंह की खानी पड़ी तथा वे

भाग खड़े हुये : इस युद्ध में काफी सिख शहीद हुए। गुरू जी टीले से नीचे उतरे जहां पर सिख आदि खड़े हुए थे। जत्थेदार महां सिंघ को आशीर्वाद दिया। इसी समय एक सिख ने आ कर कहा 'सच्चे पातशाह! एक माता का घायल शरीर पड़ा हुआ है। यह भी कहा जाता है कि माता जी इस समय पुरुष भेष में थे तथा कपड़े कुछ फटे हुए थे। मुगलों के साथ लड़ते लडते घायल हुई दिखाई देती हैं उनके पास ही एक मुगल की लाश पड़ी थी जिसे माता जी ने सांग से भेद दिया था। उसके पास ही एक और मुगल का शरीर पड़ा था जिसे गुरु जी के तीर ने, जो टीले पर से आया था, यमराज के पास भेज दिया था। माता जी के जख्म काफी मामूली थे उन्हें पट्टी कर दी गयी। पानी पिलाया गया। लड़ाई का सारा हाल माता जी ने भी गुरु जी को सुनाया। गुरू जी सारे मालवे का दौरा करते हुए साबो की तलवंडी पहुंचे। माता भाग कौर भी गुरुसिख भाइयों बहनों की तरह गुरू जी के साथ रहे। (सूरज प्रकाश में दी गई घटना कि माता भाग कौर नग्न रहती थीं क्योंकि वे ब्रह्मज्ञानी की अवस्था पर पहुंच चुकी थीं बिल्कुल बेबनियाद है। ब्रह्मज्ञानी की अवस्था सिख धर्म में स्वीकार्य नहीं न ही लाखों गुरू के सिख जो इसी अवस्था को पहुंचे की ऐसी घटनायें कहीं मिलती हैं) वैसे माता जी के नाम रंग में विलीन रहते थे। रात को जहां भी गुरू साहिब ठहरते थे और पहरा लगता था आप हाथ में सांग लेकर रात भर पुरुषों की तरह पहरा देते थे। दमदमा साहिब में माता भाग कौर गुरू जी के साथ ही रही। जब गुरू जी व सिख दक्षिण की ओर गये तो माता जी भी साथ रहीं। नान्देड़ भी वह साथ ही रहीं। नान्देड़ में सभी भी घटनायें उन्होंने देखी! स० बन्दा सिंघ बहादुर की तैयारी के समय भी माता जी वहीं थीं। पुरुष पहिरेदारों के होते हुए भी वह सतर्क रह कर, रात भर जाग कर पहरा दिया करती थीं। हजूर साहिब गुरुद्वारे के पास अब भी माता जी का बुंगा मौजूद है।

गुरू साहिब के पवित्र शरीर पर जब दुष्टों का वार हुआ और वे शरीर त्याग गये तब माता जी 'नान्देड़' को छोड़कर 'बिदर' शहर में आ कर रहने लगे जहां गुरू नानक जी भी गये थे।

जब तक माता जी जीवित रहीं, जिस चश्मे से उन्होंने अमृत को प्राप्त किया उसी चश्मे से आत्मतृप्ति का दान दे कर, मुर्दे मन जिन्दा

करती रहीं। स्वयं तृप्त हुईं व लोगों को तृप्त करती रहीं।

काश ! आज की सिख माताएं भी ऐसी महान आत्मा से जीवन दिशा लेकर गुरू घर पर विश्वास रखतीं तथा दशम पिता की चलाई हुई मरयादा (Dcipline) तथा उपदेशों को मान कर सिखो जीवन पर पहरा देतीं।

+ O +

अभी तो हमारी रगों में, कलगीधर का खून है।

जिन सिखों ने

सिख धर्म के मौलिक सिद्धांतों को दृढ़ किया,
जो अपनी धरोहर तथा लासानी इतिहास से जुड़ गये,
जिन्होंने अपना जीवन गुरबाणी की शिक्षाओं के अनुसार ढाल लिया,
उनमें ऐसी दृढ़ता, निर्भयता व बल आ गया कि
वे ज़ालिम को ललकार कर इस तरह कहने लगे :

नेज़ों पे टांग दे,
काट बंद बंद दे,
भट्टियों में झोंक दे,
आरों को सौंप दे,
मेरी जवानी कढ़ कर,
मेरी जवानी जल कर,
गायेगी एक ही रागणी
कि धर्म पर मरने में,
दशमेश के दुलारों की,
जान की सकून है।

तेगों की धारों से पूछ,
मन्नू की तलवारों से पूछ,
सतलुज के किनारों से पूछ,
वी. टी. के डण्डों से पूछ,
बज-बज के घाटों से पूछ,
डायर जैसे लाटों से पूछ,
जेतो के मोर्चों से पूछ,
एक ही अगवाई मिलेगी,
एक ही गवाही मिलेगी :

कोई जुल्म कोई सितम,
हमें झुका सकता नहीं,
हमें मिटा सकता नहीं,
अभी तो हमारी रगों में,
कलगीधर का खून है।

सिखों ने कभी झुकना नहीं,
सिखों ने कभी मिटना नहीं,
सिखों को झुकाने वाला,
सिखों को मिटाने वाला,
ख्याल एक जनून है।

यदि मुझ पर इतबार नहीं,
तो औरंगों की रूहों से पूछ,
शहीद गंज के कुओं से पूछ,
तलवंडी की जूहों से पूछ,

कोई जुल्म कोई सितम,
हमें झुका सकता नहीं,
अभी तो हमारी रगों में,
कलगीधर का खून है।